प्रकाशक
जीतमल लूणिया, मंत्री
सस्ता-साहित्य-मंडल, अजमेर

खर्चा जो लगा है

कागज़	११०)
छपाई	१०५)
बाइंडिंग	१५)
लिखाई	६०)
	२९०)
व्यवस्था, विज्ञापन, आदि खर्च	२२०)
	५१०)

कुल प्रतियाँ २१००

लागत मूल्य प्रति कापी ।)

खर्चा जो पुस्तक पर लगाया गया

प्रेस का बिल व लिखाई	२९०)
व्यवस्था, विज्ञापन आदि खर्च	१००)
	३९०)

एक प्रति का मूल्य ≡)

इस प्रकार इस पुस्तक में फी प्रति -) और कुल १२०) की घटी उठाई गई है।

मुद्रक
जीतमल लूणिया,
सस्ता-साहित्य-प्रेस, अ.

प्राक्कथन।

जब अंगरेज नहीं आये थे, भारतवर्ष कितना हरा भरा सम्पन्न और समृद्ध देश था, उसके स्मरण मात्र से आज के भारतवर्ष की दुःखद अवस्था देखकर रोना ही आता है। इसकी वह विपुल सम्पत्ति कहाँ गई ? इसका वह वैभव कहाँ गया ! एक समय था, जब इस देश की सौम्य शीतल छाया के लिए अन्य देश के निवासी तरसते थे, इसकी सम्पत्ति और वैभव को देखकर आश्चर्य्य चकित होते थे। आज वही देश प्रखर पराधीनता के ताप मे तड़फ रहा है, गैरों के पैरो तले रोदा जा रहा है। इस देश के लाखो प्राणी भूखों मरते हैं और करोड़ो को एक समय भी भर पेट भोजन मयस्सर नहीं होता। इस देश की यह दशा क्यों हुई और किसने की ? इस छोटी सी पुस्तिका का यही विषय है। जिन्होने इस देश को इस अधोगति को पहुँचाया, उनकी उसी जमाने की लेखनी का पुस्तिका मे अक्षरशः अनुवाद ही है। हमने अपनी तरफ से एक शब्द भी नहीं लिखा। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जिन कुटिल और घृणित उपायों तथा नृशंस अत्याचारो द्वारा इस देश को हथिया लिया इसका रोमांचकारी विवरण एक पृथक पुस्तक का विषय है। इस पुस्तिका में तो अंग्रेजो के इस देश में आगमन तथा भारत के हितों के प्रति उनकी निन्दनीय और घृणित उदासीनता से इस देश की सम्पत्ति किस प्रकार शनैः शनैः विलीयमान हो गई यही बताया गया है।

ईस्ट इंडिया कम्पनी को इङ्गलैण्ड के राजा द्वारा एक निश्चित अवधि तक भारतवर्ष में व्यापार करने के लिए चार्टर मिला करता था। उस अवधि के समाप्त होते ही फिर दूसरा चार्टर दिया जाता था। नये चार्टर दिये जाने से पहले एक सरकारी कमेटी अवस्था की जांच किया करती थी और उसीकी रिपोर्ट के अनुसार उसमें आवश्यक परिवर्त्तन कर दिया जाता था। इसी नियम के अनुसार सन् १८५३ में पार्लियामेंट के सदस्यों की एक कमेटी बैठी थी। उसने भारतवर्ष की अवस्था का अनुसंधान करके जो रिपोर्ट प्रकाशित की उसी का यह अक्षरशः अनुवाद मात्र है। स्व० दादा भाई नौरोजी की Poverty of India नामक पुस्तक से हमने इसका अनुवाद किया है।

अंग्रेजी शासन को इस देश में एक युग बीत गया। विदेशी शासकों को किसी विशाल देश पर शासन करने के लिए यह आवश्यक होता है कि वे वहां की जनता की मनोवृति को ही बदल दें। इसी नियम के अनुसार हमारे प्रभुओं ने हमारे इतिहास को बिगाड़ा और जनता को अन्धेरे में रखकर हर एक बात को इस प्रकार पेश किया, मानों इनके आगमन के पूर्व यहां प्रत्येक बात बिगड़ी हुई थी, यहां के निवासी असभ्य और जंगली थे, उन्हे भर पेट भोजन नहीं मिलता था, वे एक दूसरे से लडते थे, न यहां पर सड़के थी, न व्यापार के लिए कोई सुविधा। सर्वत्र, अन्याय अनाचार, बेईमानी और लूट-खसोट का साम्राज्य था। यह सब देखकर ईश्वर को इस देश पर दया आई और उसने अंग्रेजों को यह हुक्म और अधिकार दिया

कि वे यहां आकर सुशासन और सुव्यवस्था स्थापित करें। इसी लिए उन्होंने यहां पधारने का कष्ट उठाकर इस देश पर असीम कृपा की। यहां आकर उन्होंने परस्पर लड़ने वाली हिन्दु और मुसलमान नाम की दो जातियो को एक दूसरे का गला काटने से रोका, सुशासन स्थापित किया, सड़कें, रेल, तार बनवाये और व्यापार तथा आवागमन की अनेक सुविधाएं कर दीं। परन्तु तनिक दृष्टिपात करने से पता चल जाता है कि यह सब झूठ है, धोखा है। सड़कें, रेल तार यह इस देश के लाभ के लिए नहीं, प्रत्युत इस देश को सदा अपने फोलादी पंजे में पकड़े रखने के लिए बनाये गये हैं। अगर इसके कारण जनता को भी सुविधा होगई है तो वह अनयास ही। वास्तव में इनसे भारतवासियों को नहीं, इङ्गलैण्ड के निवासियों को लाभ पहुँचा है, हमारे हित के लिए बनाई गई तलवार ने हमारा रक्त शोषण किया है। यह बात आज निर्विवाद सिद्ध है कि अंग्रेजों ने यहां के व्यापार को नष्ट कर अपने देश के व्यापार को बढाया; हथियार छीनकर इस देश को नपुंसक बना दिया, और शासन के प्रत्येक विभाग को अपने हाथ में शनैः शनैः लेकर हमें बिलकुल परावलम्बी बना दिया। यहां के व्यापार को नष्ट करने तथा यहां से अपने देश को धन ढोने की अंग्रेजों की नीति जैसी पहले थी वैसी ही आज भी है। अन्तर केवल इतना है कि पहले उनके ढग बर-बरतापूर्ण थे, अब उन पर सभ्यता का नकाब चढा दिया गया, जो कहीं अधिक घातक है। उदाहरण के लिए सन् १९२१ की सरकारी रिपोर्ट देखिए। उस समय सरकार द्वारा संचालित यानी सरकार के अधीन आठ रेलें थीं। इस सन में उनके

लिए उन्तीस करोड़ का वह विदेशी माल खरीदा गया जो यहीं पर मिल सकता था और देशी माल खरीदा गया सिर्फ सात करोड़ का। पिछले वर्ष ऐसेम्बली के सदस्यों ने रेलों के लिए देशी माल खरीदने की बात कही थी, जो सरकार ने नहीं मानी! सरकारी रिपोर्ट का कहना है कि आजकल रेलों के लिए ४० करोड़ का विदेशी तथा सिर्फ दस करोड़ का देशी माल खरीदा जाता है। दस करोड़ का यह देशी माल भी अधिकतर गोरे व्यापारियों द्वारा ही खरीदा जाता है। श्रीयुत करीमभाई ने औद्योगिक कमीशन के सामने गवाही देते हुए कहा था कि "हमने सरकारी आवश्यकता की पूर्ति के लिए सरकार के अति अनुरोध करने पर एक चमड़े का कारखाना खोला था। इस व्यवसाय में हानि की ही अधिक सम्भावना थी। इसी कारण दूसरे व्यापारी इस काम को करने को तैयार न थे। सरकार ने हमारे माल को भी खूब पसन्द किया था। लेकिन कुछ ही दिन बाद जब गोरों के चमड़े के कारखाने यहां खुल गये तो सरकार ने हमारा माल लेना बन्द कर दिया। इलाहाबाद में अति उत्तम डेरे तैयार होने पर भी सरकार ७० से ९० रुपये तक प्रति तम्बू अधिक देकर गोरे व्यापारियों से ही माल खरीदती है।" इस अभागे देश के ग़रीब मजूरों के पेट काटने की यह नीति ही इस देश की गरीबी और पतन का मुख्य कारण है। देशी उद्योग-धंधे नष्ट होने तथा देश के दरिद्र होने का रहस्य भी इसी निकृष्टतम नीति में है।

स्वदेशी के प्रचार को समूल नष्ट करने के लिए रेलवे के किराये में भी भारी अन्तर रक्खा है। विलायत का माल देश

के कोने कोने में पहुँच सके इस लिए बम्बई, करांची और कलकत्ता आदि बन्दरो से अन्य स्थानो को माल जाने का किराया बहुत ही कम है और यदि वही माल अन्य स्थानों से रवाना किया जाय तो किराया बहुत अधिक है। यहां से विलायत को जाने वाले कच्चे माल पर भी बम्बई, कलकत्ता और करांची आदि स्थानों के लिए रेल किराया बहुत कम रक्खा गया है। मुलतान से करांची ५७६ मील है, और दिल्ली ४५४। परन्तु किराया मुलतान से करांची के लिए एक रुपया नौ पाई है और दिल्ली के लिए एक रुपया तीन आना दो पाई प्रति मन ! मुलतान और करांची के मार्ग में हैदराबाद है, पर मुलतान से हैदराबाद का भाड़ा कराची की अपेक्षा अधिक है। सात सौ मील दमोह से बम्बई का गेहूं का भाड़ा प्रतिमन ११ आने ९ पाई है, और दमोह से दिल्ली का जो केवल ४४५ मील ही है, उसी गेहूँ का भाड़ा ११ आना प्रतिमन है। कानपुर से कलकत्ते तक ७३३ मील का चमड़े का भाड़ा ५ आने तीन पाई फी मन, बम्बई का ८४० मील का ७ आने और दिल्ली से कलकत्ते ९०३ मील का ७ आने ६ पाई फी मन है। परन्तु भूगांव से कानपुर का १५९ मील का भाड़ा ५ आने ८ पाई फी मन दिल्ली से कानपुर का २७१ मील का ६ आने ४ पाई तथा जबलपुर से कानपुर का ३४८ मील का रेल भाड़ा प्रति मन ९ आना ८ पाई है ! पाठक आश्चर्य्य करेंगे कि इङ्गलैण्ड के बन्दरो से ६००० मील का ईस्पात का भाड़ा १८–२० रु० प्रति टन है और ऐंटवर्प से तो सिर्फ १४–१५ रु० ही है, परन्तु इधर टाटानगर से बम्बई १८–२० रु० और करांची तक ५० रु० प्रति टन है ! बम्बई

से जापान रुई जाने का भाड़ा ८-९ रु० प्रति टन और लायलपुर से दिल्ली ३८७ मील का भाड़ा २८-३० रु० प्रति टन है। कलकत्ते की जूट मिलें गोरों के हाथ मे है, इस लिए ई. बी. रेलवे हानि सहकर भी कम भाड़ा लेती है। ई. बी. रेलवे गोरे चाय वालो के लिए ही बनाई है। यह चाय पर इतना कम भाड़ा लेती है कि इसे सदैव हानि रहती है। इस बात को औद्योगिक कमीशन तथा स्वयं सरकार तक ने स्वीकार किया कि रेलवे के भाड़े की दर के कारण देशी उद्योग-धन्धो को लाभ के बजाय उल्टी हानि ही होती है। पाठक इतने ही से सहज ही में अनुमान लगा सकेंगे कि हमारे हित के लिए किये गये कामो ने हमारा कितना गला काटा है, काट रहे हैं। समाचार-पत्रो के पाठक अभी भूले न होंगे कि दो साल पहले करेन्सी कमीशन ने यहां के रुपये की दर बढ़ा दी थी। जन साधारण क्या समझे कि यह चाल यहां का धन इङ्गलैण्ड को ढोने तथा यहां के उद्योग-धन्धे नष्ट करने मे कितनी घातक सिद्ध हुई है। पाठकों को यह भी पता होगा कि यहां के मिलों के बने माल पर ड्यूटी देनी पड़ती थी और विलायती माल उससे मुक्त था, जिसके कारण देशी माल विदेशी के मुकाबिले में कभी सस्ता बिक ही नही सकता था। इधर असहयोग के बाद इस विषय मे आन्दोलन बहुत हुआ और सरकार की इस घातक नीति की कड़ी निन्दा होने लगी तो सरकार को लाचार होकर देशी मिलोके बने माल पर से ड्यूटी उठा लेनी पड़ी। लेकिन एक हाथ देकर सवा हाथ खीच लेने मे हमारे प्रभु बड़े दक्ष हैं। उन्होने रुपये की दर बढ़ा दी। इसका परिणाम यह

हुआ कि विलायत से जो माल पहले अठारह सौ का चलकर यहां अठारह सौ का ही विकता था और वापिस उन्हें उतना ही मिलता था, अब १८ सौ का भेजकर वे उसे यहां सस्ता करके १६ सौ को बेचने लगे और चूंकि यहाँ के रुपये की दर सरकार ने बढ़ा दी है इसलिए सोलह सौ रुपया यहाँ से चलकर वहाँ उन्हें १८ सौ का १८ सौ ही मिलने लगा। इस प्रकार डियूटी उठ जाने से देशी माल विलायत । अपेक्षा जो सस्ता पड़ने लगा था उस सस्ते-पन का इस प्रकार मुकाबिला कर दिया गया। भोले भाले भारतवासी ताकते ही रह गये, वे समझ भी न सके कि रुपये का मूल्य बढ़ जाने के क्या मानी हैं। रुपये की दर बढ़ जाने का असर अमीरों तक ही सीमित नहीं रहा। इससे ग़रीबो को तो बहुत ही अधिक हानि हुई है। एक ग़रीब किसान या मजूर आज एक रुपये का माल अपने घर से लाकर बाज़ार में बेंचता हैं तो उस रुपये का मूल्य एक रुपया नहीं है, और उसी रुपये का माल यदि वह बाज़ार से अपने घर के खर्च के लिए द कर ले जाय तो रुपये की दर बढ़ जाने के कारण इस बेचने और ख़रीदने में उसे चार आने का घाटा रहता है। इस प्रकार यहाँ का धन इस खूबी से खींचा जा रहा है कि लोगों को पता ही नहीं चलता कि उनसे उनका धन कोई लूट रहा है। व्यापारी लोग केवल इतना कहते हुए सुने जाते हैं कि पैसा नहीं रहा, व्यापार नही चलता ! परन्तु पैसा क्यो नहीं रहा और कहाँ चला गया, इसे वे नहीं समझते।

कैसी कैसी कुटिल और घातक चाल ो से यहाँ का धन और

सम्पत्ति को ढोया गया, इसको विस्तार-पूर्वक बताना हमारे लिए इस प्राक्कथन मे असम्भव है। इसलिए इसे हम यही छोड़ कर केवल एक बात और कह देना चाहते हैं। कहा जाता है कि हम हिन्दू और मुसलमान अंगरेजों के आगमन के पूर्व एक दूसरे की गर्दन नापने में लगे हुए थे और यदि आज अंगरेज यहाँ से चले जायँ तो फिर वही हालत हो जायगी। पाठक इस छोटी सी पुस्तिका मे पढ़ेंगे कि ये दोनों जातियाँ अंगरेज़ों के यहाँ आने से पहले किस तरह रहती थीं। पर स्कूलो और कालेजो मे हमे और ही इतिहास पढ़ाया जाता है। आज कल कालेजों मे जो इतिहास हमें पढ़ाये जाते हैं वे इतनी विद्वेष भरी बातों से परिपूर्ण हैं कि यदि हमारी अपनी सरकार होती तो उन पुस्तको को जलवा दिया गया होता और उनके लेखकों को कड़ी से कड़ी सज़ा दी गई होती। आजकल देश में सर्वत्र जिस पापी फूट को हम देख रहे हैं उसके लिए अगर सबसे अधिक जिम्मेदार कोई चीज़ है तो ये पुस्तकें ही हैं, जिन्हें इतिहास के रूप मे हमे पढ़ाया जा रहा है। इन पुस्तको को पढ़कर, कोई भी युवक हृदय, यदि वह हिन्दू है तो मुसलमानों के लिए, और यदि मुसलमान है तो हिन्दू के लिए, अच्छे भाव कैसे रख सकता है?

अपने कथन को सप्रमाण पाठको के सामने रख देने के लिए हम यूनिवर्सिटीयो में पढ़ाई जाने वाली इतिहास की अनेक विषैली पुस्तको में से केवल एक पुस्तक से कुछ बातें उद्धृत किये देते हैं। इसीसे पाठकगण सहज ही समझ सकेंगे कि हमारे दिमाग और हृदय बचपन से ही ऐसे साँचे मे ढाले जा रहे हैं

जिनसे हम दूसरे से घृणा और द्वेष करें तथा अपने बुजुर्गों को अत्याचारी असभ्य और अनाचारी समझें, और अंगरेजों को अपना उद्धारक।

अपनी "दी आक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया" में २५० वें पृष्ठ पर विन्सेन्ट ए० स्मिथ महाशय लिखते हैं कि "सौभाग्य से हमें फीरोजशाह के हाथ की लिखी एक पुस्तक प्राप्त हो गई है। उस पुस्तक मे उसने उन कार्य्यों का उल्लेख किया है, जिन्हे वह सत्कर्म समझता था। उसने अंग-भंग करने की सजा की प्रथा को जो उठा दिया, वह तो अवश्य ही एक सराहनीय कार्य्य था" आगे चल कर लेखक फीरोजशाह की लिखी हुई पुस्तक से कुछ उद्धरण अपनी पुस्तक मे देते हैं। वे इस प्रकार लिखते हैं:—
फीरोजशाह मे जब धर्मान्धता जागृत हो जाती थी, तब वह बड़ा ही भयंकर हो जाता था। हिन्दुओ के कुछ नये मंदिर बनने की बात सुनकर उसे घोर दुःख हुआ वह लिखता है:—

'ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित होकर मैंने इन इमारतो को विध्वंस करा दिया; और नास्तिको के उन नेताओ को मरवा डाला। जो दूसरो को गलत रास्ते पर चलने के लिए बहका देते थे। इन नेताओ के अलावा साधारण आदमियो को मैंने बेत लगवाये और उन्हे कठोर दण्ड दिये, यह मैंने तबतक किया कि यह बुराई समूल नष्ट न हो गई।'

"वह (फीरोजशाह) देहली के निकटवर्त्ती मलूह नाम के एक गाँव मे गया। वहाँ पर एक धार्मिक मेला होता था। उस मेले मे कुछ 'अपवित्र और अविश्वासी मुसलमान' भी सम्मिलित होते थे। आगे वह लिखता है—'मैंने हुक्म दिया कि इन लोगो के

नेता और इस कुकर्म में सहयोग देने वाले सब के सब मार डाले जायँ आम हिन्दू जनता को सख्त सज़ा देने की तो मैंने मुमानियत कर ही दी थी; परन्तु मैंने उनके मंदिरो को तुड़वा कर उनके स्थान पर मसजिदें बनवा दी थीं।'

"कोहात के कुछ हिन्दुओ ने महल के सामने एक नया मन्दिर बनवाया था। उन्हे उसने मरवा डाला, जिससे कि भविष्य में कोई अन्य गैर-मुसलिम एक मुसलमानी देश में फिर ऐसी शैतानी करने की हिम्मत न करे। एक ब्राह्मण जिसने खुली हुई जगह में अपना पूजा-पाठ किया था, जिन्दा ही जलवा दिया गया था। ये असंदिग्ध और सत्य घटनाये इस बात का प्रमाण हैं कि फीरोजशाह प्रारंभिक मुसलमान आक्रमण कारियों की 'जंगली परम्परा' के अनुसार ही कार्य्य करता रहा। और इस बात मे पूर्णतः विश्वास करता रहा कि उसकी अधिकांश प्रजा के धर्म के अनुसार खुले-आम पूजा-पाठ करने वाले को, वह मौत की सज़ा देकर ईश्वर की सेवा कर रहा है।"

इसी प्रकार स्मिथ महाशय इसी पुस्तक के २१३वें पृष्ठ पर हिन्दू सम्राटों के विषय मे लिखते !—

"वास्तव मे सभी या लगभग सब की सब प्राचीन हिन्दू सरकारें प्रारम्भ से ही मुसलमानों की भाँति ही अत्याचारी थी जैसा कि अनेक प्रमाणों से स्पष्टतः प्रतीत होता है।"

उक्त उद्धरणो से विचारवान पाठक सहज ही अनुमान लगा सकेंगे कि इतिहास मे इस प्रकार की बातें भर देने से कोमल और शुद्ध-हृदय युवको पर कैसा प्रभाव पड़ता हैं। बेशक, इतिहास लेखक का कर्तव्य है कि वह सत्य को छिपाये न रक्खे। हम

स्मिथ महाशय के हेतु पर कभी आक्षेप नहीं करते अगर वे ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के कर्मचारियों द्वारा भ्रम-पूर्ण धार्मिक विचारों से नहीं जान-बूझ कर धन के लिए किये गए। इनसे भी अधिक बर्बरता पूर्ण अत्याचारों का सच्चा-सच्चा हाल लिख देते। अंगरेज लेखको ने हिन्दू या मुसलमान नरेशों के कुशासन और अत्याचारों का जहाँ खूब बढ़ा चढ़ा कर वर्णन किया है वहाँ ईस्टइण्डिया कम्पनी के समय मे की गई लूट-खसोट, बेईमानी, धोखेबाजी और प्रजा के कष्टो का ज़िक्र तक नही किया जैसा कि इस पुस्तिका से पता चलेगा, अकाल वगैरह का इन्होने जहाँ कहीं एक-आध जगह जिक्र भी किया है वहाँ उसका सारा दोष अनावृष्टि इत्यादि पर डाल दिया है। परन्तु इसके बिलकुल ही विपरीत मुसलमान बादशाहो के जमाने के अकालो का सारा दोष उस समय के बादशाह के सरे मढ़ दिया हैं। इसी पुस्तक में ३९२ पन्ने पर सन् १६३०–२ के अकालों का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं कि "शाहजहाँ के ज़माने मे दरबार की शान-शौकत, तड़क भड़क और फिजूल खर्ची के कारण प्रजा इतनी दरिद्र और पीड़ित थी, जैसा कि बहुत कम देखने मे आया होगा। शाहजहाँ के शासन-काल के चौथे और पांचवें साल मे, जब कि वह खान देश मे बुरहानपुर में डेरे डाले दक्खिन के सुल्तान के विरुद्ध आक्रामक हम्ला करने के लिए पड़ा हुआ था, उसी समय एक अत्यन्त भीषण दुर्भिक्ष ने दक्खिन और गुजरात को वीरान कर दिया था। उस अकाल के बारे मे, उस समय के सरकारी इतिहास लेखक अब्दुल हमीद ने इस प्रकार लिखा है:—

'दक्खिन और गुजरात के निवासी अत्यन्त तंग हो गये थे।

लोग एक रोटी के लिए अपना जीवन बेच देते थे, परन्तु कोई खरीदता नहीं था। एक चपाती के लिए पद बेचे जाते थे, परन्तु उन्हें कोई पूछता तक न था। मुद्दत तक बकरे के गोश्त की जगह कुत्ते का मांस बेंचा जाता था और मृतको की पिसी हुई हड्डियाँ आंटे मे मिला कर बेची जाती थीं। अन्त में दरिद्रता उस चरम सीमा को पहुँच गई कि लोग एक दूसरे को खाने लगे! और बेटे के प्रेम से उसका माँस अधिक प्यारा समझा जाने लगा। मृतकों की लाशों के मारे सड़कों के रास्ते रुक गये थे।'

"इस दुर्भिक्ष के बारे मे स्मिथ महाशय लिखते हैं कि जब दक्खिन और गुजरात की प्रजा इस प्रकार दुर्भिक्ष के मारे पीड़ित थी, उस समय बरहनपुर मे शाहजहां के डेरो मे हर प्रकार की खाद्य सामग्री प्रचुर मात्रा में मौजूद थी। और आज क्या दशा है?"

खैर, यही स्मिथ महाशय अपनी इसी किताब में ५०७ वे पन्ने पर सन् १७७० के एक अकाल के बारे मे लिखते हैं कि "कार्टियर महाशय के शासनकाल मे एक दुर्भिक्ष पड़ा। इसका कारण सन् १७६९ में वर्षा का जल्दी समाप्त हो जाना था जिसके कारण चावल की छोटी-छोटी फसल मुरझा कर सूख गई और उस बड़ी फसल की बाढ़ रुक गई जो दिसम्बर में कटने को थी। सड़को की कमी तथा कुछ दूसरी विरुद्ध परिस्थितियो के कारण अकाल इतना बढ़ गया था, जितना कि सिर्फ वर्षा की कमी से नही पड़ सकता था। ढाका और दक्षिण-पश्चिम प्रान्त तो इससे लगभग बिलकुल बच गये। गंगा के दक्खिन और उत्तर का बंगाल और विहार का सारा प्रान्त वीरान हो गया था। परन्तु जहां तक फसल का सम्बन्ध है, सन् १७७० में

सारे कष्ट का पूरे तौर पर अन्त हो गया था, और अगले तीन वर्षों में तो बहुत अधिक पैदावार हुई।

ईस्टइण्डिया कम्पनी के ज़माने में क्यों और कैसे, कितने और कैसे भीषण अकाल पड़े, तथा प्रजा कितनी पीड़ित रही यह बात भी इस छोटी सी पुस्तिका से पाठकों को सच्चे और ईमानदार अंगरेजों की लेखनी द्वारा ही मिलेगी। इसे पढ़ कर पाठक समझ लेंगे कि अंगरेजों के आगमन से पूर्ण हमारा देश कितना सम्पन्न और समृद्ध था, प्रजा कितनी सुखी और शान्त थी। तथा इनके आगमन के पश्चात् वह किस प्रकार क्रमशः दीन, दुर्बल और दरिद्र होता गया।

स्कूलो और कॉलेजों मे पढ़ने वाले विद्यार्थी कोर्स मे रक्खे गये इतिहासो के घातक परिणामो से अपने दिल को अंशतः भी बचाना चाहे तो वे उन किताबों के साथ साथ (यदि मजबूरन उन्हें वे किताबें पढ़नी ही पड़ें तो) इस छोटी सी पुस्तक को भी पढ़ लिया करें। नशा करना बुरा है, पर यदि कोई उससे अपने आप को मुक्त नहीं कर सकता, तो उसके मारक प्रभाव को रोकने के लिए मनुष्य को कुछ पौष्टिक पदार्थ खाने चाहिएँ। अन्यथा नशा उसकी जान का गाहक हुए बिना न रहेगा। यह वही पौष्टिक पदार्थ है। जो आज कल पढ़ाये जाने वाले इतिहासो के विष के प्रभाव को कुछ अंशो में मार सकता है।

आगरा
शरत्पूर्णिमा
संवत् १९८५

शिवचरन लाल शर्मा

विषय-सूची

भूमिका

देशी राजाओ के राज्यकाल मे भारतीय-शासन की भलाइयां और बुराइयां चाहे जो कुछ भी क्यो न रही हो, परन्तु यह बात तो निश्चय है कि मौजूदा अंगरेजी शासन-पद्धति मे जो सब से बड़ी और भयंकर बुराइयां है, वे तो उनके शासन-काल मे हरगिज़ नहीं थीं। आजकल का अंगरेज़ी शासन तो ऐसा है जो, अंगरेजो के लिए नितान्त अशोभनीय है। इसकी बुराइयां भयंकर हैं। भारत को लूटने और उसका खून चूसने की नीति सदा बढ़ती ही जा रही है। केवल ब्रिटेन ही की भलाई के लिए जो खर्च किया जा रहा है उसका बोझ भी भारत के सर पर ही लादा जा रहा है। भारत को "लूटने और उसका खून चूसने की ये बुराइयां ऐसी हैं; जो तब तक बराबर वहां बनी रहती हैं, जब तक एक सुदूरवर्ती देश दूसरे देश पर शासन करता रहता है।"* इन बुराइयों को लार्ड सैलिसबरी के शब्दों में "राजनैतिक मक्कारी" और लार्ड लिटन की भाषा मे "इरादतन की गई स्पष्ट धोखेबाजी" ने और भी बदतर बना दिया था जिसके कारण लॉर्ड सैलिसबरी के मतानुसार भारत में "भीषण कंगाली पैदा हो गई है। इसी दुरवस्था से प्रभावित होकर लॉर्ड लारेन्स ने लिखा था कि "भारत के लोग बहुत थोड़ा खाना खा कर अपना गुजर बसर करते हैं।"

---

*ये शब्द सर जॉन शोअर के हैं जो उन्होंने सन१७८७ में कहे थे।

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना खासकर भारत के धन और भारत के ही बल पर हुई है, और इन्हीं के बल पर वह टिका हुआ है। इसके अलावा ब्रिटेन भारत से लाखो करोड़ो पौंड ले चुका है, और प्रतिवर्ष लेता जा रहा है।

कोई भी निष्पक्ष और शुद्ध-हृदय अंगरेज एंग्लो-इण्डियनो की कपोल-कल्पित गाथाओं पर ध्यान न देकर यदि भारत के "गैर अंगरेजी" (Un British) शासन की वास्तविक खूबियो से परिचित हो जाय, तो वह अवश्य ही इस नतीजे पर पहुँचेगा कि अंगरेजों के मोजूदा शासन में हिन्दुस्तान की भौतिक और आर्थिक दशा इतनी गिर गई है, कि उस देश पर यह अंगरेजी शासन एक अभूतपूर्व अभिशाप कहा जा सकता है। यह दुःखदायक और दयनीय स्थिति अधिक दिन तक नहीं टिक सकती। जैसा कि अनेक सुप्रसिद्ध अंगरेजो ने पहले ही मे एक प्रकारकी भविष्यवाणी के रूप में कह दिया है, उसका अन्त अत्यन्त भयानक होगा। सर जान मालकम का कहना है कि "इस दुरवस्था और शासन के कुकर्मों के साथ-साथ इस बुराई के बदले की भावना भी आ रही है. जिसे हम साम्राज्य के नाश का बीज कह सकते हैं।" लॉर्ड सैलिसबरी ने कहा था "अन्याय के वह ताकत है जो सर्वशक्तिमान को भी नष्ट कर देगी।"

अंगरेजो को कोई न्यायोचित अधिकार नहीं है कि वे अशोभनीय ब्रिटिश निरंकुशता के साथ-साथ विदेशी निरंकुशता की सारी बुराइयाँ लेकर, जिनसे कि एक शासित जाति सदा कुचली जाती है, इस देश में रहे। जैसा कि लॉर्ड मेकाले ने कहा है "विदेशी शासन के जुँए का बोझ अन्य सब जुओं

से भारी होता है।" बारबार अनेक सुप्रसिद्ध अंगरेजों ने और लॉर्ड मेयो ने भी कहा है कि "हमारा सर्वप्रथम उद्देश तो हिन्दुस्तानियो कीभलाई करना है। अगर हम यहाँ पर उनकी भलाई के उद्देश्य से नहीं आये हैं, तो हमें यहाँ पर कदापि न रहना चाहिए।"

अगर भारत के पहिले शासक निरंकुश थे तो थे। अंगरेज अपनी खून-चूस नीति और निरंकुशता का समर्थन उनका उदाहरण देकर नहीं कर सकते।

वाशिंगटन हाउस,
७२, पेनरली, पार्क
लंदन S. E

दादाभाई नौरोजी

---

* एक पौंड लगभग पन्द्रह रुपये का होता है।

जब अंगरेज नहीं आये थे !

"मेरे ऊंचे ऊंचे कोट जो थे,
वह पडे जमीं मे हैं लोटते;
वहां उल्लू आके हैं बोलते,
जहा बाज पर न हिला सके !"

जब अंगरेज नहीं आये थे

[यह पुस्तिका भारत-सुधार संस्था India Reform Soc
द्वारा ई० सन् १८५३ में प्रकाशित की गई थी, और
सन् १८९९ मे वह पुनः मुद्रित हुई थी]

भारत सुधार नं० ६—देशी राजाओं के अधीन

भारत का शासन और उसकी दशा

इण्डिया रिफार्म सोसायटी १८५३

शनिवार ता० १२मार्च सन् १८५३ ई० को चार्ल्स स्ट्रीट के सेण्ट जेम्स स्क्वेअर मे, भारत के शुभचिन्तको की एक सभा हुई थी। इसका उद्देश्य था भारतवासियों की शिकायतो और अधिकारो के लिए लोकमत तैयार करना और उसके द्वारा पार्लियामेट का ध्यान उस विशाल-देश की शिकायतों और दावो की ओर आकर्षित करना। उस दिन सभा ने श्रीयुत एच. डी. सिमूर, एम. पी के सभापतित्व में निम्न लिखित प्रस्ताव पास किये .—

(१) भारत मे व्यापार करने का जो अधिकार-पत्र (चार्टर) ईस्ट-इण्डिया-कम्पनी के पास है, उसकी अवधि ३० अप्रेल सन १८५४ को समाप्त होती है, अतः इस अवधि के बाद भारतीय शासन

के संघटन में परिवर्तन करने का प्रश्न इतना महत्व-पूर्ण है कि उस पर पूरी रीति से गंभीरता पूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

(२) सदा की भांति अधिकार-पत्र (चार्टर) के परिवर्त्तन के लिए पार्लियामेंट की दोनो सभाओं द्वारा जो कमिटियाँ नियुक्त की जाया करती थीं, उन्हे भारतीय-शासन-प्रणाली और उसके परिणाम की जांच के लिए इस बार भी नियुक्त किया गया है। पर ये कमिटियाँ इस बार पहले की अपेक्षा बहुत देर बाद नियुक्त की गई है, जिसके कारण ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार-पत्र की अवधि समाप्त होने मे अब इतना थोड़ा समय रह गया है, कि हमारी भारतीय सरकार के शासन-विधान मे आवश्यक परिवर्तन करने के लिए जो गवाहियां इकट्ठी करना जरूरी था। वह अब नहीं की जा सकती।

(३) चूंकि अब उक्त कमिटियो ने तहकीकात करना शुरू कर ही दिया है, इसलिए यह बता देना आवश्यक है कि यदि ये कमिटियाँ ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के नौकर और अफसरों की गवाहियो पर ही निर्भर रहीं और बुद्धिमान भारत-वासियो की दरख्वास्तो और इच्छाओ को उपेक्षा करते हुए उन्होने अपनी जांच समाप्त कर दी, तो उस जांच का बिलकुल असन्तोष-प्रद होना निश्चित है।

(४) इसलिए भारत के शुभचिन्तको को इस बात पर जोर देना चाहिए कि एक ऐसा अस्थायी कानून बना दिया जाय जिसके अनुसार मौजूदा भारत सरकार तीन साल तक और इसी प्रकार अपना काम करती रहे। इससे जांच और विचार-विमर्श करने के लिए पूरा समय मिल जायगा, और पूरी जांच हो जाने पर इसी बीच में पार्लियामेंट हमारे भारतीय साम्राज्य के भावी शासन-प्रबन्ध के लिए स्थायी शासन-विधान बना सकेगी।

(५) अतः उक्त नीति के अनुसार काम करने के लिए आज यह सभा अपने को इण्डियन-रिफार्म सोसायटी (भारत-सुधार-समिति) के रूप में संगठित करती है और नीचे लिखे सज्जनों की एक कमिटी बनाती है।

श्री० टी० बारनेस, एम० पी०
,, जे० वेल, एम० पी०
,, डब्ल्यू. विग्ज, एम० पी०
,, जे० एफ० बी० ब्लेकेट, एम० पी०
,, जी० बोयर, एम० पी०
,, जे० ब्राइट, एम० पी०
,, एफ० सी० ब्राउन
,, एच० ए० बूस, एम० पी०
,, ले० क० जे० एम० कौलफील्ड, एम० पी०
श्री० जे० चीथम, एम० पी०
,, डब्ल्यू० एच० क्लार्क
,, जे० क्रूक, एम० पी०
,, जे० डिकिन्स, जन०
,, एम० जी० फील्डन, एम० पी०
,, ले० ज० सर जे० एफ० फिजेरल्ड, के० सी, बी०, एम० पी०
,, डब्ल्यू० आर० एस०

श्री० सी० हिण्डले
,, टी० हण्ट
,, ई० जे० हचिन्स, एम० पी०
,, पी० एफ० बी० जॉन्सटन
,, एम० ल्यूइन्
,, एफ० ल्यूकस, एम० पी०
,, टी० मेक् कुलघ
,, ई० मिसल, एम० पी०
,, जी० एच० मूर, एम० पी०
,, बी० ओलिवीरा, एम० पी०
,, ए० जे० ओटवे, एम० पी०
,, सी० एम० डब्ल्यू० पीफॉक
,, एप्सली पेलाट, एम० पी०
,, जे० पिलकिंगटन, एम० पी०
,, जे० जी० फिलीमोर, एम० पी०
,, टी० फिन, एम० पी०
,, एच० रीव्ही०
,, डब्ल्यू० स्कोल फील्ड,
,, डब्ल्यू व्ही० सैमूर एम० पी०

फिज़ेरल्ड, एम० पी०	,, जे० बी० स्मिथ, एम० पी०
,, एम० फोर्स्टर०	,, जे० सुलीवान
,, आर० गार्डनर, एम० पी०	,, डब्ल्यू० हारकोर्ट
रा० आ० टी० एम०	एल० हीवर्थ, एम० पी०
गिल्सन, एम० पी०	,, सी० हिण्डले, एम० पी०
वाय काउण्ट गोडेरिच,	,, जी० थाम्पसन, एम० पी०
एम० पी०	,, एफ० वारन
,, जी० हैड फील्ड, एम० पी०	,, जे० ए० वाइज़ एम० पी०

सोसायटी से सम्बन्ध रखनेवाला सारा पत्र व्यवहार कमिटी के अवैतनिक मंत्री से करना चाहिए और उन्हींके पास इस कार्य्य की पूर्त्ति के लिए चन्दा भेजा जाना चाहिए ।

कमिटी रूम्स, क्रैरेम्स चैम्बर्स
१९ हे—मारकेट
१२, अप्रैल १८७२ ई०

जॉन डिकिन्सन जन
अवैतनिक मंत्री

इण्डिया रिफार्म १८५३

यहा और वहा

भारत के सब देशी राजा संधि द्वारा सुख-दुख में साथ देने वाले हमारे मित्र हैं। परन्तु हम उनके अवगुणो को बताकर और अपने गुणो की दुहाई देते हुए उनका राज्य छीनने की उन्हे धमकी देते है। हमारा दावा है कि देशी राज्य सभी बुरे हैं और उनके सब के सब देशी शासक अत्याचारी और विलासी। उनकी प्रजा अत्याचारो के मारे कराह रही है। अतः हमारा यह कर्तव्य है कि हम उनके दुख दूर करे। पगड़ी बांधने वाले सब निकम्मे और अयोग्य हैं। परन्तु टोपधारी सभी योग्य है। अंगरेजो के भारत मे आने से पूर्व हिन्दुस्तान मे किसी भी तरह का सुशासन नही था, यह अंगरेज ही हैं, जिन्होने हिन्दुस्तानियो को सभ्यता सिखाई है, और वही यह बता रहे हैं कि शासन कैसा हो। रोम और ग्रीस के प्राचीन मन्दिर और मकबरो के खण्डहर तो सब प्रशंसा के योग्य है, वे अपने बनानेवालो की प्रतिभा और सुरुचि के प्रमाण हैं। परन्तु भारत के इनसे कही अधिक शानदार खण्डहर निरे दिखावटी और स्वार्थपरता के सूचक हैं। लार्ड एलनबरो ने इन्हें देख कर कहा था कि "हमसे पहले के शासको का बखान करते हुए और अपनी कमजोरियों पर लज्जित होते हुए मैने इन खण्डहरो को देखा, इन पर विचार किया।" लार्ड एबरडीन ने तत्काल

उत्तर देते हुए कहा—"हाँ, पिरामिडो को देख कर भी तुम इसी तरह लज्जा का अनुभव कर सकते हो।"

पश्चिम में जिन चीजों की हम दिल से प्रशंसा करते हैं, पूर्व में वही चीजें हमारी प्रशंसा के योग्य नहीं होती। पश्चिम में जब हम कहीं किसी बड़े उपयोगी और सजावट के काम को देखते हैं, तो हम उसे समृद्धि एवं शान्ति-पूर्ण सुशासन का एक चिन्ह मानते हैं; परन्तु पूर्व में जब हमारी नज़र ऐसी चीज़ो पर पड़ती है, तब हम कुछ और ही ख़याल करने लगते हैं। इस समय करोड़ो रुपये की जो आमदनी हो रही है वह हमारे पहले भारत का शासन करनेवालो की अद्भुत नहर-व्यवस्था का ही प्रतिफल है। देश मे इन अद्भुत कार्य्यों के चिन्ह अब भी सर्वत्र पाये जाते हैं। पर हम उनकी ओर आँख उठा कर देखते भी नही। हाँ, अपने अपेक्षाकृत छोटे छोटे नकली कामो पर ही हम अभिमान जरूर करते हैं।

यह कहा जाता है कि हमने हिन्दुस्तानियो को, पतित और रग-रग से झूठा पाया, हिन्दू धर्म मे दुर्गुणो को पैदा करने की सहज और घातक प्रवृत्ति है, जो मुसलमानी राज्य मे एक बार खूब खुली-खिली थी। हमारे अत्यधिक आलसी और स्वार्थी, गवर्नर बड़े-से-बड़े देशी राजाओ के मुकाबिले मे, दया और भलाई की प्रतिमा समझे गये। मुगल बादशाहो की विलासी स्वार्थपरता ने लोगो को पतित और निर्बल बना दिया। मुगलो से पहले के बादशाह भी या तो विवेक हीन और अत्याचारी थे, या आलसी और व्यभिचारी। न इनके पूर्वाधिकारी, खिलजो बादशाह ही कुछ अच्छे थे।

इस समय इस देश के सार्वजनिक समाचारपत्रों पर हमारा आधिपत्य है; जनता की सहानुभूति भी हमारी ही तरफ़ है, अतः भारत मे हमसे पहले राज्य करनेवालो की बुराई करके लोगो की नजरो मे अपने को ऊँचा उठा लेना हमारे लिए बड़ा आसान काम है। हम अपनी ही प्रशंसा की बातें कहते हैं और कहते हैं कि हमारा कथन अविश्वास के पात्र नही है। लेकिन जब पहले के शासन की प्रशंसा का जरा भी कही उल्लेख पाते हैं तो झट से उसे सन्देहास्पद करार देते हैं। चौदहवीं शताब्दी में मुग़लों ने भारत पर जो विजय प्राप्त की. उसकी तुलना हम पूर्व में, उन्नीसवीं शताब्दी की विजयी, किन्तु सौम्य और दयापूर्ण अंगरेज़ी युद्धो की प्रगति से करते है। परन्तु यदि हमारा उद्देश पवित्र और निष्पक्ष हाता तो हम मुसलमानो द्वारा हिन्दुस्तान पर किये गये इन हम्लो का मुकाबला उसी ज़माने के नारमनो द्वारा इङ्गलैण्ड पर किये आक्रमणो से करते। मुसलमान बादशाहो के चरित्र की तुलना उन्हींके समय के पश्चिमी बादशाहो के चरित्र से करते; उनकी लड़ाइयो और युद्धो को हम अपने फ्रान्सीसी युद्धो या धर्म के नाम पर लड़ी गई लड़ाइयो के साथ एक ही तराजू पर तौलते। इसी प्रकार मुसलमानो की विजयो से हिन्दुओ के चरित्र पर जो प्रभाव पड़ा, उसकी तुलना हम उस प्रभाव से करते जो ऐंग्लो-सैक्सनों के चरित्र पर नारमनो की विजय से हुआ था। नारमनो की विजय के पश्चात् ऐंग्लो सैक्सन लोगो का स्वभाव ऐसा बन गया था कि यदि कोई किसी से "अंगरेज" कह कर सम्बोधन करता, तो वह उसे अपना बड़ा अपमान समझता। "उस समय

"अंग्रेज शब्द" एक गाली-सा बन गया था। उस समय जो लोग न्यायाधीश नियुक्त किये गये थे, वे ही सारे अन्यायों और विषमताओं की जड़ थे। उस समय के मजिस्ट्रेट, जिनका धर्म उचित फैसला देना था, सबसे अधिक निर्दय थे और साधारण चोर, डाकू और लुटेरो से भी अधिक लूटने-खसोटने वाले थे।" उस जमाने के बड़े आदमी इतने अर्थ-लोलुप थे, कि वे धनोपार्जन मे इस बात की वे बिलकुल परवा नहीं करते थे कि फलां उपाय उचित है या अनुचित। उस समय लोगों का चरित्र इतना भ्रष्ट था कि स्काटलैण्ड की एक राजकुमारी को अपने सतीत्व की रक्षा के लिए एक दीक्षिता ईसाइन साधुनी के वस्त्र पहन लेने पड़े।※

हमारा कहना है कि मुसलमान बादशाहों का इतिहास प्रारंभिक विजेताओं की निर्दयता और लूट-मार की घटनाओं से परिपूर्ण है। परन्तु इनका समकालीन क्रिश्चियन इतिहास भी क्या ठीक वैसा ही नहीं है ? आप ईसाई-इतिहास के पन्ने पलटिए। ग्यारहवीं शताब्दी के अन्त मे, जब जेरुसलम पर सब से प्रथम धर्म के नाम पर युद्ध करने वालो का कब्जा हुआ था, उस समय जेरूसलम की चहार दीवारी के अन्दर चालीस हजार आदमी थे। वे सब के सब बिना किसी भेद-भाव के उन धर्म-योद्धाओ द्वारा तलवार के घाट उतार दिये गये। उस समय तलवार बहादुरो की रक्षा न कर सकी। उसी प्रकार कमजोर और डरपोको का गिड़गिड़ाना तथा प्राणो की भीख मांगना भी उन्हे न बचा सका।

※ हेनरी, आफ हंटिगडन एंग्लो सेक्सन क्रोनोकल एन्ड एडमड

बूढ़े, बच्चे, स्त्री, पुरुष किसी के भी हाल पर रहम नहीं किया गया ! जिस तलवार ने माता को मौत के घाट उतारा था, उसीने उसके दुध-मुँहे बच्चे का भी खून पीया। जेरुसलम शहर की गलियां लाशो और लोथो के ढेरो से पट गई थी। प्रत्येक घर से निराशा और दुःख की चीत्कारों की करुणध्वनि गूंजती हुई सुनाई पड़ रही थी।

बारहवीं शताब्दी की बात है। फ्रान्स के सातवें लुई ने जब विट्री (Vitri) नामक शहर पर अपना अधिकार जमाया, तो, उसने उसमे आग लगवा दी, जिसके कारण तेरह सौ जीवित प्राणी स्वाहा हो गये। जिस समय फ्रान्स का यह अत्याचारी शासक विट्री की निरीह जनता के प्राणो के साथ यह खेल खेल रहा था, उसी समय इङ्गलैण्ड मे, स्टीफन के शासनकालमे ऐसी प्रचंडता के साथ युद्ध हो रहा था कि, किसान लोग ज़मीन को बिना जोते-बोये ही छोड़कर अपने हल आदि को या तो नष्ट करके या वैसे ही छोड़ कर, अपने प्राणो को लेकर इधर-उधर भागे-भागे फिरते थे !

इसके बाद चौदहवीं शताब्दी की हमारी फरासीसी लड़ाइयो को ही लीजिए। उनका जितना "भयावना और नाशकारी परिणाम हुआ, उतना आज तक किसी भी देश या युग मे नहीं देखा गया।" कहा जाता है कि मुसलमान विजेताओ की घोर निर्दयता के जितने उल्लेख प्रामाणिक लेखको द्वारा पाये जाते हैं, उतने उनके द्वारा किये गये बड़े से बड़े सत्कार्यों के नहीं। परन्तु हमारे पास इन्ही के समकालीन ईसाई-विजेताओ की घोरतम निर्दयताओ के काफी प्रमाण मौजूद हैं। लेकिन क्या हमारे पास उनकी दया और सत्कार्यों के भी प्रमाण हैं ?

चूँकि बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखकर, बड़े ढंग मे लगातार इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि जन-साधारण की दृष्टि में, देशी सरकारों और देशी-राजाओ को गिरा दिया जाय, जिससे कि उनका राज्य हड़प लेने मे सुविधा हो, इसलिए हम यह बता देना आवश्यक समझते है कि हर एक हिन्दुस्तानी ओलिवर के लिए हमारे पास एक क्रिश्चियन रोलेण्ड भी मौजूद है, जिससे लोग यह समझ ले कि अगर हिन्दुस्तान मे मुसल्मान विजेता निर्दय और लुटेरे थे, तो पश्चिम में उनके समकालीन ईसाई बादशाह उनसे भी अधिक बढ़े-चढ़े लुटेरे और अत्याचारी थे। आज-कल हमारी कुछ ऐसी आदत बन गई है कि हम पंद्रहवीं और सोलहवी सदी के हिन्दुस्तान की तुलना उन्नीसवीं सदी के इंगलैंड से करते हैं और उसी के अनुसार झट नतीजे पर पहुँच जाते है।

एक सावधान और गंभीर समीक्षक* का कहना है कि "जब दूसरे देशो के साथ हम इङ्गलैंड का वर्णन करते है, तब हम, इङ्गलैंड आजकल जैसी है उसीका जिक्र करते हैं। रिफार्मेशन† के समय के पूर्व के समय को तो शायद, हम कभी विचार ही में नही लाते। हमारी यह एक आदत सी बन गई है कि हम दूसरे देशो को अज्ञानी और असभ्य समझते है, और ऐसा विश्वास बनाये रखते हैं कि ये हमारे बराबर उन्नतिशाली नहीं हैं; फिर चाहे उनकी उन्नति कुछ ही समय पहले हमारी उन्नति से कितनी ही बढी-चढ़ी क्यों न रही हो।"

---

* सर थोमस मनरो।

† यूरोप का क्रान्ति-युग

अगर सोलहवी शताब्दी के हिन्दुस्तान की तुलना उन्नीसवी शताब्दी के इङ्गलैंड से करना उचित हो सकता है, तब तो फिर ईसवी सन् की पहली सदी के समय मे इन दोनो देशों की तुलना करना कहीं अच्छा होगा, क्योंकि उस समय भारत की सभ्यता अपनी उन्नति के शिखर पर थी और इङ्गलैंड की सभ्यता का कहीं नाम-निशान भी न था। भारतीय सभ्यता का अवनति-काल अलैक्ज़ेण्डर द्वारा हिन्दुस्तान पर की गई चढ़ाई के समय से लेकर मुसलमानो की विजय तक का समय है। लेकिन हमारे पास इस बात के काफ़ी प्रमाण हैं कि उस समय मे, और उससे पूर्व के समय मे हिन्दुस्तान एक हरा-भरा, समृद्धिशाली और हर प्रकार से सुखी और सम्पन्न देश था; और उसकी यह उन्नति मुग़ल साम्राज्य के विध्वंस तक बनी रही। मुगल साम्राज्य के विध्वंस का समय, अठारहवी शताब्दी का आरंभ-काल है।

यूनानी आक्रमण के समय

ऐल्फिन्स्टन् का कहना है कि "यूनान से आये हुए यात्रियों ने भारत के जिन-जिन भागों को देखा उनका वर्णन किया है। उस से पता चलता है कि उस समय भारतवर्ष की जन-संख्या ख़ूब बढी-चढ़ी थी और यहाँ के निवासी ख़ूब सुखी और सम्पन्न थे।" सिंधु और सतलज नामक नदियो के बीच मे १५०० शहर बसे हुए थे। पेलिलोथ्रा (?) नामक शहर ८ मील लम्बा और डेढ़ मील चौड़ा था; उसके चारो ओर एक गहरी खाई थी। शहर के चारो ओर चहारदीवारी थी, जिसमें ५७० बुर्ज और १६४ फाटक बने हुए थे। विदेशों मे व्यापार करने के लिए

प्रत्येक शहर और उसके व्यापारिक अड्डे, हिन्दुस्तान की व्यापारिक उन्नतावस्था के सूचक हैं। ऐरियन बड़े आश्चर्य के साथ लिखता है, कि उस समय सारा हिन्दुस्तान स्वतन्त्र था। फौज को युद्ध और शान्ति, दोनो के समय मे बराबर तनख्वाह मिला करती थी। सिपाहियों को घोड़े और शस्त्र राज्य की ओर से मिलते थे। वे देश में कभी लूट-खसोट नहीं करते थे। यूनान के निवासियों ने हिन्दुस्थानी लोगो की वीरता की बड़ी प्रशंसा की थी, क्योंकि उन्होंने एशिया के अन्य देशों से भी मोरचा लिया था और भारत की तलवार का मज़ा भी चक्खा था। भारत की पुलिस को वे बहुत अच्छा बताते थे। चन्द्रगुप्त की छावनी मे, जिसमें चार लाख सिपाही रहते थे, चोरी किये गये माल का मीज़ान लगाने पर पता चला कि ४५) रु० रोज़ से अधिक की चोरी कभी नहीं हुई। न्याय, सम्राट् और उसके पञ्च करते थे। ज़मीन से लगान वसूल किया जाता था। ज़मीन बादशाह की बताई जाती थी। लगान, पैदावार का एक चौथाई हिस्सा होता था। खेत सब पैमाइश किये हुए होते थे और सिंचाई के लिए पानी का अच्छा प्रबन्ध था। व्यापार पर कर देना पड़ता था और सौदागर तथा व्यापारियों को आय-कर (इनकम् टैक्स) भी देना पड़ता था। सरकार की ओर से सड़कें थीं और सड़को पर दूरी के सूचक पत्थर थे। युद्ध के समय मे घोड़े लड़ाई की गाड़ियाँ खींचते थे पर फौज के प्रस्थान के समय यही काम बैल करते। दस्तकारी सादी किन्तु सुन्दर होती थी। सोना, जवाहरात, रेशम और गहने घर-घर में थे। जितनी बातें ऊपर बताई गई हैं उनमें वे सब चीजें हैं जिनकी कि आवश्यकता

सभ्य-जीवन में होती है। अनाज तथा अन्य पैदावार की किस्में और परिमाण से पता चलता है कि देश में उस समय पैदावार अच्छी होती थी। "उनकी संस्थायें अच्छी थीं, शत्रुओ के प्रति उनका आचरण मनुष्योचित था। उनका साधारण ज्ञान बहुत ज्यादा था। पुरुष और प्रकृति का ज्ञान सर्व साधारण को वहाँ इतना अधिक था कि ऐथेन्स के उन्नति-युग में वहां के बड़े से बड़े दिमागों में उसकी कहीं अस्पष्ट सी झलक-मात्र दिखाई दी।"*

ईसा के समय के कुछ शताब्दी पूर्व भारतवर्ष में अशोक नाम का एक हिन्दू राजा राज करता था। उसके आज्ञा-पत्र, उसके विशाल साम्राज्य की सीमा के द्योतक हैं, और उनसे उसकी सरकार की उन्नतावस्था तथा सभ्यता का पूरा पता चलता है। उन आज्ञा-पत्रों में, साम्राज्य भर में अस्पताल या दवाखाने स्थापित करने, सड़कों के इधर-उधर पेड़ लगाने और कुँए बनाने का आदेश है। ईसा से ५६ वर्ष पूर्व, विक्रमादित्य नाम के एक हिन्दू राजा का, वर्णन करते हुए लिखा है कि विक्रमादित्य एक बड़ा शक्तिशाली राजा था। वह एक सभ्य और आबाद देश में राज्य करता था।

मुसलिम-आक्रमण-काल

हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों के लेखक इस बात में पूर्णत सहमत हैं कि मुसलमानों की विजय के समय भारतवर्ष खूब सम्पन्न था। वे कन्नौज के राज्य की विशालता और भव्यता तथा सोमनाथ के मंदिर की अतुल सम्पत्ति का वर्णन बड़े प्रशंसा-युक्त आश्चर्य से करते हैं।

---

* ऐल्फिन्स्टन कृत भारतीय इतिहास

प्रत्येक मुसलमान शाही घराने मे अनेक बादशाह असाधारण चरित्रवान हुए हैं। मुहम्मद गज़नी की बुद्धिमत्ता, शील और साहस के साथ-साथ उसका कला और साहित्य के लिए उत्साह वर्णन प्रसिद्ध है। सुप्रसिद्ध कला और साहित्य सेवियो के प्रति अत्य-धिक उदारता के कारण उसकी राजधानी में प्रतिभाशाली साहि-त्यज्ञों का इतना बड़ा जमाव रहने लगा था कि एशिया मे वैसा कभी देखा तक न गया था। अगर सम्पत्ति इकट्ठा करने मे वह लुटेरा था, तो सम्पति का अच्छे से अच्छा और शान के साथ उपयोग करने मे उसका कोई बराबरी नही कर सकता था उसके चार उत्तराधिकारी कला और साहित्य के बड़े पुरस्कर्त्ता थे और उनकी प्रजा उन्हे अच्छा शासक मानती थी। क्या इनके समकालीन पश्चिमी बादशाह विलियम दी नोरमन तथा उसके उत्तराधिकारियों के विषय में भी हम यही कह सकते हैं। जो बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी मे हुए थे। आम तौर पर सब लोग यही समझते हैं कि मुसलमानो के लिए हिन्दुस्तान की विजय बड़ी आसान बात थी; परन्तु इतिहास हमे बतलाता है कि कोई भी हिन्दू राज्य बिना करारे संघर्ष के नहीं जीता जा सका। उनमे से अनेक तो कभी जीते ही न जा सके, जो कि आज तक प्रभावशाली राज्य बने हुए हैं। हिन्दुस्थान मे मुसलमानी राज्य का संस्थापक शाहबुद्दीन, बारहवी सदी के अन्तिम काल मे देहली में राजपूत सम्राट द्वारा बिलकुल परास्त कर दिया गया था।

अफगान बादशाह

शाहबुद्दीन के उत्तराधकारियों मे से कुतुबुद्दीन भी एक था।

एल्फिन्स्टन; "हिस्ट्री आफ इन्डिया" (पहला हिस्सा।)

इसने कुतुब मीनार बनवाई थी । जिसके समान ऊँची मीनार संसार भर में नहीं है । इसने मीनार के निकट ही मसजिद भी बनवाई थी जिसकी विशालता और कारीगरी की सुन्दरता हिन्दुस्तान की अन्य किसी मसजिद मे नहीं पाई जाती ।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक फरिश्ता लिखता है कि "सुल्ताना रजिया में वे सब गुण थे, जो एक रानी मे होने चाहिए उसके कार्य्यों को अधिक तीव्र दृष्टि से देखने वाले भी उसमे कोई ऐब नहीं पा सकते । परन्तु वह स्त्री थी ।" एक योग्य और न्याय-प्रिय शासक के सब गुणों से वह सम्पन्न थी । परन्तु इतिहास सुल्ताना रजिया के समकालीन, इंग्लैंड के राजा जौन या फ्रान्स के राजा फिलिप के सम्बन्ध मे हमे ऐसी अच्छी बातें नही बताता । इसी घराने का बादशाह जलालुद्दीन भी अपने साहित्य-प्रेम, हृदय की विशालता तथा दया के लिए अपनी प्रजा के आदर का पात्र था ।

दक्षिण के मध्य युगीन हिन्दू-राज्य

चौदहवीं सदी के मध्य-काल मे करनाटक और तैलिंगण के हिन्दू राज्य फिर से स्थापित हुए थे । करनाटक की राजधानी विजयनगर तो इस बीच में उन्नति के शिखर पर पहुँच गई थी । वह इतना शक्तिशाली बन गया था कि इससे पूर्व के किसी राजघराने के शासन-काल मे उसकी इतनी उन्नति हुई ही नहीं थी । उस समय दक्खिन के हिन्दू-मुसलमान राजाओं मे इतना सद्भाव था कि उनके आपस मे विवाह-शादी भी होने लगे थे । मुसलमान बादशाहो के यहां सब से बड़े फौजी अफसर हिन्दू होते

एल-फिन्स्टन की "हिस्ट्री आफ इन्डिया" (I: \ ol)

थे। और हिन्दू राजाओं के यहां मुसलमान। विजयनगर के एक हिन्दू राजा ने तो अपनी मुसलमान प्रजा के लिए एक मसजिद भी बनावा दी थी।

तुग़लक बादशाह

सन् १३५१ ई० में मुहम्मद तुग़लक़ के शासन काल में राजधानी से लेकर सीमा-प्रान्त तक सुसंगठित पैदल और घुड़ सवारों की चौकियां थीं, जिनका काम सड़क पर चौकी-पहरा देना था। हिन्दुस्तान की राजधानी देहली शहर को भव्य शहर कहा गया है और उसकी मसजिदें तथा चहार दीवारी लासान। इसके उत्तराधिकारी फीरोज़शाह ने कृषि की उन्नति के लिए दरियाओ के किनारे पचास बांध बँधवाये थे और चालीस मसजिदे, तीस कालेज, सौ सरायें, तीस तालाव, एक सौ अस्पताल एक सौ नहाने के घाट और एक सौ पचास पुल इसके अतिरिक्त आश्चर्य जनक कारीगरी की अनेक इमारते तथा सब के मनो-विनोद के लिए अनेक स्थानो का निर्माण भी कराया था। इसके अलावा यमुना से एक नहर भी निकाली थी, जिसे पीछे से अंग्रेज़ सरकार ने मरम्मत कराके पूरा किया। यह नहर उस स्थान से निकाली है, जहां से यमुना करनाल के पहाडो से पृथक होकर हांसी और हिसार की ओर जाती है।

इस बादशाह के बारे मे इतिहास लेखक, आगे चलकर यह लिखता है कि फीरोज़शाह के शासन-काल मे प्रजा बड़ी सुखी थी, लोगो के घर अच्छे और सुसज्जित थे, और प्रत्येक घर मे स्त्रियों के पास सोने-चांदी के क़ाफी जेवर थे। प्रजा मे प्रत्येक

व्यक्ति के पास एक अच्छा तख़्त और एक सुन्दर बाग़ अवश्य था। यह इतिहास लेखक, चाहे विश्वसनीय भले ही न हो परन्तु यह बात तो निश्चय ही है कि भारतवर्ष उस समय एक हरा-भरा और शांतिः सम्पन्न देश था। इस कथन की पुष्टी इटली से आये हुए एक यात्री के बयान से भी होती है। यह यात्री सन् १४२० ई० मे भारत मे आया था। गुजरात की सम्पन्नावस्था देखकर तो यह चकित रह गया था। उसने गंगा के किनारे, सुन्दर-सुन्दर बाग़ बग़ीचों से घिरे हुए. अच्छे-अच्छे शहर देखे। मराज़िया नगर को जाते समय उसे चार सुप्रसिद्ध शहरो में हो कर जाना पड़ा था। मराज़िया नगर को उसने सोना, चांदी और जवाहरातो से भरा हुआ पाया, एक शक्तिशाली नगर पाया इस कथन का समर्थन वारबोरा और वार टेमा के कथन द्वारा भी होता है, जिन्होंने सोलहवां सदी के प्रारंभ में हिन्दुस्थान मे भ्रमण किया था। पहले व्यक्ति ने खम्भात को एक सुदृढ़ नगर बताया है जो कि एक सुन्दर तथा उपजाऊ भूमि मे बसा हुआ था, और जिसमें फ्लैण्डरस (हालैण्ड) की भांति सब देशो के व्यापारी तथा कारीगर रहते थे। सीज़र फ्रेडरिक ने गुजरात के ऐश्वर्य्य का वर्णन भी ठीक ऐसा ही किया है।

पन्द्रहवी शताब्दी के मध्य-काल की बात है, मुहम्मद तुग़लक़ के अत्याचारो और अराजकता के राज्य मे, जब कि देश के अधिकांश भागो मे इधर-उधर आक्रमण और लड़ाइयां हो रही थी, इब्नबतूतां नाम के एक यात्री ने इस देश का पर्यटन किया था। वह अपनी यात्रा के वर्णन में अनेक बड़े-बड़े तथा आबाद शहरो का ज़िक्र करता हुआ कहता

कि जब अराजकता और अशान्ति के युग में भी इस देश की इतनी अच्छी अवस्था है तो शान्ति और सुशासन के समय में तो न मालूम यह कितनी उन्नतावस्था मे रहा होगा ।

सन् १४४२ ई० मे, तैमूरलंग के राजदूत अब्दुरीजेन ने दक्षिण भारत का निरीक्षण किया था । यह भी अन्य समीक्षकों और दर्शको के दिये गये इस देश की समृद्धि के वर्णनों से पूरी तरह सहमत है । खानदेश का राज्य तो इस समय मे बड़ा ही समृद्धि-शाली राज्य था । दरियाओ के किनारे जगह-जगह पर पत्थर के अनेक सुन्दर घाट बने थे, जिनके कारण खेतो की सिंचाई बड़ी सुगमता से हो सकती थी । घाटो की बनावट इस देश की कारीगरी और इस देश के निवासियो की योग्यता का ज्वलंत प्रमाण हैं ।

वह शाही जमाना

मुगल घराने का पहला बादशाह बाबर भी हिन्दुस्तान को उतनी ही घृणा की दृष्टि से देखता था जितनी घृणा की दृष्टि से यूरोपियन उसे अब भी देखते है । परन्तु वह कहता है कि यह देश अत्यन्त सभ्य और धनवान है। उसने यहां की इतनी बड़ी आबादी तथा हर पेशे के अनेक हुनरमन्द आदमियो को देखकर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया है । अपने शासन के आवश्यकीय कामो के अतिरिक्त वह सदा तालावो और छोटी नहरो के बनवाने और अन्य देशो के फल वगैरा अनेक जरूरत की चीजो को यहां पर पैदा कराने के उद्योग में लगा रहता था ।

बाबर का बेटा हुमायूं बड़ा चरित्रवान् और सदाचारी था। इसे शेरशाह ने हराकर हिन्दुस्तान से मार भगाया था। शेरशाह बड़ा योग्य और अत्यन्त बुद्धिमान था। उसके कार्य्य बुद्धि और प्रजा की भलाई से परिपूर्ण होते थे। यद्यपि उसे अपने अल्प शासन-काल में सदा लड़ाई के मैदान में ही रहना पड़ा, परन्तु उसने अपने राज्य मे प्रशंसनीय शांति स्थापित कर दी थी और शासन-विभाग को बहुत कुछ उन्नत बना दिया था उसने बंगाल से लेकर पश्चिम रोहतास तक जो सिंधु नदी के निकट है, एक पुख्ता सड़क बना दी थी। इस सड़क पर जगह--जगह सरायें और हर डेढ़ मील पर एक-एक कुआ भी बनवा दिया था। हर मसजिद मे एक-एक इमाम और एक-एक मुअज़्जिम रहता था और हर सराय मे गरीबो और कगालो के लिए सदावर्त्त का प्रबन्ध था। हिन्दुओं और मुसलमानो की जात-पांत के अनुसार ही सेवा सुश्रूषा के लिए इन सरायों मे नौकर चाकर भी मिलते थे। सड़कों पर छाया के लिए पेड़ो की कतारे लगवा दी थीं। और इस इतिहास लेखक के अनुसार कहीं-कहीं अस्सी वर्ष तक पुराने दरख्त पाये जाते थे।

अकबर

सुप्रसिद्ध अकबर के चरित्र के सम्बन्ध मे तो विशेष कहने की आवश्यकता नही है। वह शासन-सभा मे जितना चतुर था। लड़ाई के मैदान में उतना ही वीर था। अपने ज्ञान, सहिष्णुता, उदारता, दया, साहस, संयम, उद्योग-शीलता तथा हृदय की विशालता के लिए तो वह बहुत प्रसिद्ध था। पर अपने शासन की आन्तरिक नीति के कारण अकबर की गणना उन अच्छे से

अच्छे सम्राटों में है, जिनका राज्य मानव-जाति के लिए एक ईश्वरीय आशीर्वाद और नियामत सिद्ध हुआ है। (१) उसने अपने शासन काल मे अपराधियों की "अग्नि परीक्षा बन्द कर दी थी। लड़कों की चौदह वर्ष और लड़कियो की बारह वर्ष की अवस्था से पूर्व विवाह करने की सख्त मनाई करदी थी। कुर्बानी मे जानवरो का मारा जाना रोक दिया था। हिन्दू धर्म के विरुद्ध, उसने बेवाओ को अपना दूसरा विवाह करने की आज्ञा दे दी थी। उसने उन बेवाओ का सती होना रोक दिया था जो स्वेच्छा से अपने पति के साथ जलने के लिए तैयार न थी। उसके यहां हिन्दुओ को मुसलमानो के समान ही नौकरी मिलती थी। उसने काफिरो पर लगने वाला कर (जज़िया) उठा दिया था। यात्रियो को जो टॅक्स देना पड़ता था वह भी माफ कर दिया था। लड़ाई मे कैद कर दिये गये लोगो को, गुलाम बनाने की प्रथा को कड़ाई के साथ रोक दिया था। लोगो की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए शेरशाह ने जो काम शुरू किया था, उसे अकबर ने पूरा किया था। अपने साम्राज्य के अन्तर्गत खेती करने योग्य सारी जमीन की उसने दुबारा पैमाइश कराई। हर बीघे की पैदावार का ठीक ठीक पता लगाया। उसमे से जनता को कितना भाग दिया जाय उसका निश्चय किया और उसीके अनुसार उस पर एक निश्चित कर रुपये के रूप मे मुकर्रर कर दिया। परन्तु किसानो को इस बात की स्वतंत्रता दे दी थी कि उन्हे रुपये के रूप मे कर प्रतीत होतो वे पैदावार के उस निश्चित हिस्से को ही दे दें। इसके

१ एल्फिन्स्टन का इतिहास खंड २ पृ० २८०

साथ साथ उसने अन्य अनेक दुःखदायी करों को बन्द कर दिया था, अफसरो को प्रजा से नजराना लेने की भी मनाई कर दी थी। इन बुद्धि पूर्ण कार्यों और उपायो द्वारा जनता के सर से बहुत से कर उठ गये। उसने अपने मुल्की अधिकारियों (Revenue officers) को जो हिदायतें दी थीं, और जो हमें भी प्राप्त हो गई है, उनसे उदार शासन-प्रबन्ध तथा प्रजा के सुख और आराम के लिए उसकी उत्कट इच्छा का पता चलता है। न्याय-विभाग के अधिकारियों को उसने जो हिदायतें दी थी, उनसे उसके प्रजा के प्रति न्याय और भलाई करने के भाव स्पष्ट दिखाई देते हैं। उसने उन्हे आज्ञा दे रक्खी थी कि जहां तक हो सके वे अपराधियों को फांसी की सजा न दें और भयंकर राज-विद्रोह के अपराधो के अलावा वे उसकी स्वीकृति लिये बिना किसी को भी फांसी न दे। फांसी की सजा के साथ-साथ अपराधियों के अंग-भंग की सजा को भी उसने रोक दिया था। उसने अपनी फौजो मे सुधारकर उनका पुनर्संगठन किया था। पहले ऐसा नियम था कि सरकार को करो से जो आय होती थी, उसीमें से एक खास हिस्सा सिपाहियो के लिए निश्चित कर दिया जाता। परन्तु अकबर के नये सुधारो के अनुसार उन्हे सरकारी खजाने से प्रति मास पृथक वेतन मिलने लगा था। प्रजा की रक्षा के प्रबन्ध तथा अन्य सार्वजनिक हित के कामो के अलावा उसने अनेक भव्य भवनो का निर्माण भी कराया था, जिनकी प्रशंसा बिशप हेबर ने हृदय से की है। उसने शासन के प्रत्येक विभाग में काम करने की पद्धति और नियम निश्चित किये और उनके अनुसार काम करना शुरू कराया। उसकी प्रस्थापित संस्था मे "सुशासन

और सुन्दर व्यवस्था की आश्चर्य-जनक प्रतिमूर्ति थी, जहां असंख्य लोग बिना किसी गुल-गपाड़े के शान्ति पूर्वक काम करते रहते थे। और राज्य में अत्यधिक आमदनी के होते हुए भी पूरी किफायत शारी से काम लिया जाता था।"

अकबर जितना शानदार था उतना ही सरल भी था। जिन यूरोपियनों ने उसे देखा था उन्होंने उसे स्वभाव का मिलनसार, उदात्त, दयावान और सख्त, खान-पान मे संयमी, कम सोने वाला, तोपें और बन्दूक बनाने में चतुर, तोप चलाने में दक्ष, तथा यंत्र-कला मे निपुण, अद्भुत उद्योगशील, गंवारो तक के प्रति मिलनसार अपनों के लिए प्यारा और रौबीला तथा दुश्मनों के लिए खौफनाक था। क्या अकबर के समकालीन फ्रान्स के राजा चौथे हैनरी या इंग्लैण्ड की रानी एलीज़ाबैथ के विषय में भी हम यही कह सकते हैं।

राजा नहीं, पिता

ई० सन् १६२३ में इटली के पीट्रो डील वैले नामक यात्री ने, जहांगीर के शासन-काल के अन्तिम वर्ष में जहांगीर के चरित्र और भारतवर्ष की दशा के सम्बन्ध में लिखा था कि "आम तौर पर सब लोग ऊँचे दरजे के लोगों की तरह शान के साथ रहते हैं, हिन्दुस्तानियो मे ठाट-बाट के साथ रहने की आदत सी है। जहांगीर के शासन-काल मे वे इस शान-बान के साथ बड़ी आसानी से इसलिए रह लेते हैं कि बादशाह उन्हे शान-शौकत से रहता देखकर उनका धन-धान्य छीनने की नियत से उनपर किसी प्रकार के झूठे दोषारोपण नही करता, जैसा कि उस समय दूसरे मुसलमान देशो में होता था।"

लेकिन अकबर के नाती शाहजहां के राज्य-काल में भारतवर्ष अत्यधिक समृद्धिशाली हो गया था। उसकी प्रजा ने निर्विघ्न शांति और सुशासन का पूरा आनन्द और लाभ उठाया था। यद्यपि सर थोमस रो ने, सन् १६१५ ई० मे शाहंशाह की छावनी मे उससे भेंट की थी तथापि उस समय उसने वहां विपुल सम्पत्ति देखा और उसे देखकर वह आश्चर्य चकित हो गया था। उसने देखा था कि कम से कम दो एकड़ ज़मीन सोने और चांदी के काम से सुसज्जित दरी और क़ालीनो तथा परदो से बिछी पड़ी थी, जिनका मूल्य सोने और जवाहरात से जड़ी हुई मखमल के बराबर होता है। परन्तु थोमस रो के अलावा हमारे पास टेवर-नियरके कथन का प्रमाण भी मौजूद है। उसका कहना है कि तख्त ताऊस के बनवाने वाले ने, जब वह सिंहाहनारूढ़ हुआ तब सोना और कीमती जवाहरात का तुलादान कर लोगो में लुटवा दिया था। फिर भी उसका अपनी प्रजा पर शासन एक राजा की भांति नही, बल्कि एक बड़े परिवार पर एक उदार हृदय पिता के समान था।" अपने शासन के आन्तरिक प्रबन्ध पर वह सदा कड़ी नज़र रखता था। अपने राज्य मे शान्ति और सुप्रबन्ध तथा शासन के प्रत्येक विभाग मे सुव्यवस्था की दृष्टि मे शाहजहां का शासन भारत मे अद्वितीय रहा है। अपने प्रत्येक काम में वह इतना मितव्ययी था कि अपनी कन्धार की चढ़ाई और बारुरु प्रदेश की लड़ाई आदि के भारी खर्चे के अलावा दो लाख घुड़ सवारो की स्थायी सेना के व्यय के लिए नियमित रूप-से व्यय करते हुए भी, सोना, चांदी और जवाहरात के ढेरों के अतिरिक्त, लगभग, चौबीस करोड़ नक़द मुद्रा उसने खजाने में

छोड़े थे। उसका व्यवहार अपनी प्रजा के प्रति दया-पूर्ण और पितृवत् था। अपने आस-पास के लोगो के प्रति उसके भाव कितने उदार थे, इसका पता अपने बेटो मे उसके विश्वास से चलता है (१)

देश की इस समृद्धि की नींव इतनी दृढ़ हो गई थी कि औरंगजेब के दीर्घ, असहिष्णु और अत्याचारी राज्य में भी वह एक मुद्दत तक हरा-भरा बना रहा। औरंगजेब के बाद उसके उत्तराधिकारी बादशाह कमजोर और दुष्ट निकले। इसी कारण तीस वर्ष के अन्दर ही कुशासन के कारण मुगल साम्राज्य का विध्वंस हो गया। फिर सन् १७३९ मे नादिरशाह जो विपुल धन यहां से ढोकर ले गया उससे इस बात का पता चलता है कि उस समय भी तुलनात्मक दृष्टि से भारतवर्ष कितनी सम्पन्नावस्था में था।

पन्द्रहवीं और सोलहवी शताब्दी के दक्खिन के अनेक विख्यात राजाओ में बीजापुर का दीवान मलिकअम्बर एक वीर योद्धा और प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ के नाम से विख्यात था। उसके अन्दर एक असाधारण प्रतिभा थी। उसने अपनी शासन निपुणता का भीतर और बाहर दोनो जगह खूब ही मान बढ़ाया था, उसने इजारे की प्रथा तोड़ दी। पहले पैदावार का एक हिस्सा लगान के रूप मे दिया जाता था, उसके बजाय भी उसने लगान रुपये के रूप मे निश्चित कर दिया। जिन गांवों की दशा

---

१ ऐलफिंस्टोन खंड २ पृष्ठ ३०९।

* ग्रैण्ट डफ खंड १ पृष्ठ ९४–९६

बिगड़ गई थी, उनको फिर से सुधारा। इन उपायो तथा सुधारों से देश कुछ ही दिनों में हरा-भरा और समृद्धिशाली बन गया। यद्यपि उसके शासन-प्रबन्ध मे व्यय बड़ी उदारता से किया जाता था तथापि उसके राज्य की आय भी विपुल थी। बीस वर्ष से भी अधिक समय तक वह विदेशी विजेताओ के लिए एक अभेद्य दुर्ग के समान दृढ़ बना रहा। यद्यपि मलिकअम्बर को लगातार लड़ाइयाँ लड़नी पड़ी, तथापि इस अद्भुत व्यक्ति को अपने राज्य में शान्ति कालीन कलाओं की वृद्धि के लिए पर्याप्त समय मिल जाता था। उसने किरकी नामक शहर बसाया था, और अनेक भव्य महल बनवाये थे। अपने राज्य-काल मे मलिक ने आन्तरिक शासन-विभाग में ऐसी प्रबन्ध-पद्धति को शुरु किया, जिसके कारण राज्य के प्रत्येक गांव मे सेनापति की अपेक्षा उसका नाम अब भी शासक के रूप मे आदर से लिया जाता है।

चौदहवी और पन्द्रहवी शताब्दी में मुसलमान बादशाहो के समकालीन हिन्दू राजाओ के चरित्र के बारे में तो हमें कुछ नहीं मालूम; परन्तु हमें इतना पता तो जरूर है कि इस जमाने मे इनके राज्य अपने पूर्वजों के समान ही काफी शान और शक्ति से परिपूर्ण थे। हमें यह भी पता है कि एकाध को छोड़कर सभी खास-खास मुसलमान बादशाहो के प्रधान हिन्दू ही थे। अर्थ-सचिव और प्रधान सेनापति का काम उन्ही के हाथों में थे।

सदाचार का आदर्श

सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में और, औरंगजेब के

शासन-काल में मुग़ल साम्राज्य को जड़ से हिला देने वाला "लुटेरा" शिवाजी एक वहुत ही योग्य और अत्यन्त व्यवहार-चतुर सेनापति था। उसकी मुल्की शासन-व्यवस्था बड़ी सुव्य-वस्थित और नियमित थी। प्रान्तीय तथा ग्रामीण अफसरो से, अपनी प्रजा की रक्षा के लिए बनाये गये नियमो के पालन कराने की कार्यक्षमता उनमे थी। शिवाजी के दुश्मन भी इस बात के साक्षी हैं कि वे न्यायपूर्ण नियमो द्वारा लड़ाई की उन बुराइयो को कम कर देने के प्रवल इच्छुक थे। और इनका पालन वे बड़ी सख्ती से कराते थे, सब बातो का विचार करने पर कहना पड़ता है कि यह वीर पुरुष अपने सदाचार का वह आदर्श उप-स्थित कर गया है जिसकी समता करना तो दूर की बात है पर उसका कोई देशवासी उसको पहुँच तक नही पाया है। पर शिवा-जी को आन्तरिक शासन-प्रबन्ध की शक्ति उनकी युद्ध-चातुरी से कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी थी। (२) उनकी इस आन्तरिक शासन-कुशलता का प्रभाव अस्सी वर्ष बाद सन् १७५८ ई० में भी दिखाई पड़ता है। मराठा साम्राज्य के बारे मे ऐनक्वोटिलडू पेरन ने सन् १७५८ मे जो वर्णन किया है वह इस प्रकार है:—

"चौदह फरवरी सन् १७५८ ई० को मैं सूरत जाने के उद्देश से, माही से गोआ के लिए रवाना हुआ। अपनी सारी यात्रा मे, प्रत्येक राज्य के सिक्को के नमूने मै लेता गया, फलतः कन्याकुमारी से देहली तक इस समय जितने सिक्के प्रचलित हैं, उन सब के नमूने मेरे पास मौजूद हैं।"

---

(२) ग्रैण्ट डफ लिखित मराठों का इतिहास-खण्ड २.

उसी वर्ष २७ मार्च को दिन के दस बजे मैं पश्चिमी घाट की पर्वतमाला से गुजरता हुआ जब मराठों के प्रदेश में मे पहुँचा, तो मुझे प्रतोत होने लगा कि, मैं सत्य-युग की उस सादगी और सुख के बीच मे हूँ, जहां प्रकृति अभी तक अपनी पूर्वावस्था मे ही है, जहां पर लड़ाई और कष्टो का लोगो ने नाम तक नहीं सुना। लोग प्रसन्न, उत्साही और पूर्णतया स्वस्थ थे। असीम आतिथ्य सत्कार वहां का सार्वभौम गुण था। प्रत्येक दरवाजा सदा खुला था और पड़ौसी, मित्र, एवं विदेशियों का भी एक सा स्वागत होता। घर में जो कुछ भी होता उनके सामने खुले हृदय से रख दिया जाता। चलते चलते मैं औरंगाबाद के नजदीक जा पहुँचा। शहर कोई सात मील रहा होगा। यहां से मैं एलोरा की प्रसिद्ध गुफाओं को देखने गया था।*

पेशवाओं का शासनकाल

शिवाजी के कई उत्तराधिकारी बड़े योग्य थे। उनमें से पेशवा बालाजी विश्वनाथ और उनके सुपुत्र बाजीराव बल्लाल के नाम उल्लेखनीय है। बाजीराव मे एक महाराष्ट्रीय राजा के सब गुण विद्यमान थे! वह साहसी, उत्साही और कष्टो को धैर्य्य पूर्वक सहनेवाले थे। व्यवहार कुशलता बुद्धिमत्ता और तत्परता आदि कोकन के ब्राह्मणो के प्रसिद्ध सद्गुण तो उनमें विद्यमान थे ही। पर उनका मस्तिष्क उर्वर था और भुजाओ मे अपनी , सोची

---

* एस एन्कटिक टू पेरन के भारतीय प्रवास का संक्षिप्त विवरण नामक एक लेख से, जो १७६२ में जन्टलमन्स मेगाजिन नामक एक पत्र में छपा था। पृ० २७६।

योजनाओ को कार्य।मे परिणत करने का बल था । उनकी अथक उद्योगशीलता और सूक्ष्म दृष्टि ने उनके अन्दर एक शक्ति पैदा कर दी थी, जिससे कि गंभीर और राजनैतिक महत्वपूर्ण प्रश्नों पर भी भलीभांति विचार कर वे बहुत जल्दी अपना मत स्थिर कर सकते थे । वह एक असाधारण वक्ता थे; उनकी बुद्धि तलस्पर्शी थी और वह स्वभाव के सीधे सादे थे । लेकिन वे बड़े चतुर और साहसी सेना-नायक थे; अपने अदने से अदने सिपाही के सुख-दु:ख मे सदा सम्मिलित होने के लिए उनके पास हृदय था ।

इनके उत्तराधिकारी बालाजी राव,में पर्याप्त राजनैतिक बुद्धिमत्ता, व्यवहार कुशलता और महान विनम्रता थी। स्वभाव से कुछ आलसी और विलासी होते हुए भी वह उदार और दानी थे । वह अपने सम्बन्धियो और आश्रितो के प्रति दयावान, किन्तु अपनी प्रजा पर आक्रमण करनेवालो के घोर शत्रु थे । लगातार-युद्ध की चिन्ता में लगे रहने पर भी वे अपना अधिकांश समय, राज्य की आन्तरिक शासन-व्यवस्था में ही लगाते थे । उनके शासन-काल मे सारे महाराष्ट्र की दशा बहुत कुछ सुधर गई थी। बालाजी रावने इजारे की पद्धति को उठा दिया और न्याय विभाग की साधारण दीवानी अदालतों मे पर्याप्त सुधार किया था। नाना लैश (?) पेशवा के जमाने को तो सारे महाराष्ट्र के किसान "अब तक दुआयें देते हैं।"* यद्यपि बालाजी राव के उत्तराधिकारी श्री माधवराव

---

* Grant Duff's History of the Marathas Vol,II .P 160.

बड़े युद्ध-प्रवीण थे तथापि एक शासक की हैसियत से वालाजीराव के चरित्र का महत्त्व अधिक है।

"गरीबों की धनिकों और निर्बलों की अत्याचारियों से रक्षा करने तथा उस समय की समाज-रचना जहां तक आज्ञा देती थी, उसके अनुसार, सबके साथ समानता का व्यवहार करने के लिए वह सुप्रसिद्ध थे।" बालाजीराव ने अपने सुप्रबन्ध में किसानों की शिकायतों पर ध्यान दे कर राज्य के मुल्की अधिकारियों को अपने पद और अधिकारों का दुरुपयोग करने से रोक दिया था। उस ज़माने में खेतों की पैदावार की दृष्टि से महाराष्ट्र प्रान्त भारत के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा अधिक उन्नतावस्था में था। परम्परागत हकों का दावा रखने वाले लोगों को ऊँचे अधिकार देने और उदारता पूर्वक उनकी तरक्की करने की नीति, उनके अन्दर देश-भक्ति बढ़ाने और सुशासन की दृष्टि से उनमें राष्ट्रीय भावनाओं को उत्तेजित करने का बढ़िया काम करती थी। पेशवा माधवराव को राज-काज में, अपने मंत्री सुप्रसिद्ध रामशास्त्री से, बड़ी सहायता मिलती थी। रामशास्त्री इतने पवित्र और धर्म्मात्मा न्यायाधीश थे, कि किसी भी परिस्थिति में उनका चरित्र सदा आदरणीय समझा जाता था। खासकर अपने चरित्र के प्रत्यक्ष उदाहरण से उन्होंने अपने देशवासियों का बड़ा उपकार किया। उनके जीवन-काल में ही उनकी राय का सब बड़ा आदर करते और वह पुख्ता समझी जाती थी। उनके समय की पंचायतों के फैसले जिनमें लोगों पर डिक्रियां भी दी जाती थीं, आज भी प्रमाण माने जाते हैं। लोक-सेवा के लिए उनके उज्वल चरित्र और अथक परिश्रम के पुनीत प्रभाव ने सब श्रेणी के लोगों की दशा सुधारने में

जादूसा काम किया था। बड़े से बड़े आदमियों के लिए उनका जीवन एक नमूना था। अपराध या भूल करने वाले बड़े से बड़े आदमी भी रामशास्त्री के नाम से भयभीत हो जाते थे। यद्यपि बड़े-बड़े पदाधिकारी तथा धनवानो ने उन्हे रिश्वत आदि का लालच दिखाया, परन्तु वे अपने चरित्र से कभी नही गिरे, और एक बार लोभ देने वाले को दुबारा उनके पास जाकर लोभ देने की बात का जिक्र तक करने का साहस न हुआ। न कभी किसी ने उनकी ईमानदारी के विरुद्ध आवाज़ उठाई। उनकी रहन-सहन अत्यधिक सादा थी। उनका यह नियम था, कि वे अपने घर मे एक दिन से अधिक के लिए खाने को नहीं रखते थे। (१) वे इतने धर्मात्मा और न्याय-प्रिय थे कि जब रघुनाथराव ने, माधवराव के भाई और उत्तराधिकारी पेशवा नारायणराव की हत्या में भाग लेने के अपराध का प्रायश्चित रामशास्त्री से पूछा तो उन्होंने बड़ी निर्भीकता से कहा कि "इस पाप का प्रायश्चित तो तुम अपने प्राण दे कर ही कर सकते हो; क्योकि अपने भावी जीवन मे अब तुमसे यह पाप और तरह नही धोया जा सकता और इसी कारण न तुम और तुम्हारा राज्य हो अब फूले-फलेगा। रही मेरी बात, सो मैं अपने लिए तो यहां तक कह देता हूँ कि जब तक शासन की बागडोर तुम्हारे हाथ मे है, तब तक मै न तो तुम्हारी नौकरी स्वीकार करूँगा और न पूना मे पैर ही रक्खूंगा।" अपनी इस बात पर वह अन्त तक कायम रहे और वाई के पास के एक गांव मे अपने जीवन के शेष दिन उन्होने एकान्तवास मे बिता दिये। (२)

---

१ ग्रण्टडफ का इतिहास खण्ड २ पृ० २०८
२ ग्रँण्टडफ खण्ड २ पृ० २ ह०

नारायणराव जिसका कि खून किया गया था, अठारह वर्ष का एक युवक था। वह अपने सम्बन्धियो को बहुत प्यारा तथा अपने नौकर-चाकरों के प्रति बहुत कृपालु था। वह इतना भला था कि उसके दुश्मनों को छोड़कर सब कोई उसे प्यार करते थे।

हैदरअली और टीपू

सुप्रसिद्ध हैदरअली माधवराव का समकालीन तथा शत्रु था। माधवराव ने लड़ाई मे उसे कई बार बुरी तरह हराया था। परन्तु ज़ार पीटर की भांति उसने अपनी हार की परवा नही की, और बड़प्पन पाने की इच्छा से इससे भी बुरी परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार हो गया। अपने मालिक, मैसूर के राजा से राज्य छीन कर तथा लगातार विजय प्राप्त करता हुआ वह, उत्तर से दक्खिन चार सौ मील लम्बे तथा तीन सौ मील चौड़े घनी बस्ती वाले राज्य का मालिक बन बैठा। उसके पास तीन लाख सेना थी। और उसके राज्य की आमदनी लग भग सात करोड़ पचास लाख रुपये सालाना थी। यद्यपि वह लगातार लड़ाइयो में लगा रहा, तौभी अपनी प्रजा की उन्नति और अपने राज्य में सुव्यवस्थित शासन-प्रणाली बनाये रखने के लिए सदा चिन्तित रहा करता था। उसके राज्य के प्रत्येक भाग में क्या व्यापारी और क्या कारीगर सभी खुशहाल थे। खेती मे तरक्की हुई, नये-नये कारीगर तथा कारखाने खोले गये, जिसके कारण राज्य मे धन का प्रवाह बहने लगा। राज्य के कर्मचारियो तथा अफसरो की लापरवाही और अधिकारो के दुरुपयोग के प्रति वह बड़ा कठोर था। मुल्की अधिकारी उससे सदा भयभीत ही रहते और थर्राते

हुए अपने कर्त्तव्य का पालन करते थे। ज़रा से गबन या धोखे के लिए उन्हें कड़ी-से-कड़ी सजा दी जाती थी। अपने राज्य के कोने-कोने पर तथा हिन्दुस्तान के प्रत्येक देशी राजा पर सदा उसकी नज़र रहती थी। राज्य में होने वाली प्रत्येक छोटी से छोटी बात का उसे पता रहता; सुदूर राज्य के भागो में होने वाला जरा सा काम भी उसके नज़र से न छिप सकता था। उसके पड़ोसियों की थोड़ी भी काना-फूँसी या इच्छा ऐसी न होती जो उसके पास न पहुँच जाती हो। एक-एक करके उसके सब सेक्रेटरी रोज़ आये हुए सब पत्र पढ़ कर उसे सुनाते, और चूंकि स्वयं लिखने में वह असमर्थ था, इस लिए संक्षेप में उन सबका जवाब वह लिखा देता, जो कि उसी समय लिख कर उसे सुना दिया जाता और तुरंत ही रवाना भी कर दिया जाता। प्रत्येक बात की बारीक से बारीक़ तफसील को खूब अच्छी तरह विचारने और साहस के साथ उसे पूरा करने के रहस्य को वह भली-भाँति जानता था।

उसके अध्यवसाय और काम को झटपट निपटा देने की शक्ति की तुलना तो केवल उसकी स्वराज्य पर-राज्य से सम्बन्ध रखने वाली तथा नित्य होने वाली ताजी से ताजी घटनाओं की संपूर्ण जानकारी रखने की शक्ति से ही की जा सकती थी। शासन-संचालन मे बिना व्यर्थ की कार्यवाही बढ़ाये काम निपटाने तथा निर्णय-शक्ति मे तो वह मानव-जाति के इतिहास मे केवल अद्वितीय ही था।*

---

*हैदर के इस चरित्र-चित्रण के लिए कर्नल फलर्टन लिखित View of the Interest of India और बिल्क की History of India खण्ड २ रा देखिए।

हैदरअली, अपने हाथों से लबालब भरा हुआ एक खजाना, अपने हाथों खड़ा किया हुआ एक शक्तिशाली साम्राज्य, और तीन लाख सैनिकों की स्वयं तैयार की हुई सुसंगठित विजयोत्सुक सेना अपने बेटे टीपू सुल्तान के लिए छोड़ गया था। और उस समय के इतिहास-लेखकों तथा प्रत्यक्ष द्रष्टाओं का कहना है कि टीपू सुल्तान को जो विरासत अपने पिता से मिली थी, वह उसके-शासन काल मे किसी प्रकार भी कम नहीं हुई थी।

"जब कोई किसी अपरिचित देश मे जाय वहां की भूमि को, भली प्रकार जोती-बोई पावे वहां के निवासियों को उद्यमी देखे नये-नये शहरो, बढ़ते हुए व्यापार–धन्धों, तरक्की करते हुए, नगरों, और हर बात मे उन्नति देखे, तो वह निश्चय ही इस नतीजे पर पहुँचेगा कि यहां का शासन लोगो की इच्छा के अनुकूल है। टीपू सुल्तान के देश का यही चित्र है और उसके शासन के संबंध में हम जिस नतीजे पर पहुँचे वह भी यही है। भाग्यवश टीपू के राज्य मे हमें कुछ दिन ठहरना पड़ा था; और यदि अधिक नहीं तो लड़ाई के दिनो मे घूमने वाले अन्य अफसरों के इतना तो अवश्य ही हमें उसके राज्य मे होकर सफर करनी पड़ी थी। इसीलिए ऐसा मान लेने के लिए हमारे पास काफी सबूत है कि उसकी प्रजा उसके शासन-काल में इतनी सुखी थी, जितनी कि किसी भी दूसरे राजा की प्रजा हो सकती है। क्योकि हमने उन्हे किसी प्रकार की शिकायतें करते नहीं देखा। अगर शिकायतें होतीं ही तो, टीपू की प्रजा के लिए, टीपू की शिकायत करने का वह सब से अच्छा अवसर था; क्योंकि उस समय टीपू के दुश्मनों के हाथो मे काफ़ी शक्ति थी और उस समय उसके चरित्र

पर लोगो को आक्षेप करते देख कर उन्हें खुशी ही होती। विजित देशो की प्रजा विजेताओं की आज्ञा का चुपचाप पालन करती थी। परन्तु उससे यह पता हरगिज़ नहीं चलता था कि उनके कंधे से किसी अत्याचारी या दुःखदाई सरकार के जुँए का बोझ हटा दिया गया है। परन्तु इसके ठीक विपरीत ज्योंही उन्हे कभी कोई अवसर प्राप्त होता, वे झट अपने नये प्रभुओ को दूधकी मक्खी की तरह निकाल फेकते और अपने पुराने राजा के अनुयायी बन जाते।"*

"या तो हैदर की नई शासन-पद्धति के कारण, या टीपू के सुचरित्र और सिद्धान्तो की वजह से, अथवा राज्य पर अधिक दिनो से कोई आक्रमण न होने के कारण, और या फिर इन सब कारणों के संयुक्त फल से टीपू के साम्राज्य मे हर जगह खूब आबादी थी, जोतने-बोने योग्य सारी ज़मीन फसल से हरी-भरी थी। उसकी अन्तिम पराजय तक उसकी सेना में अनुशासन और वफादारी देखने मे आई, जो उसकी सेना की सुव्यवस्था का सबूत था। उसकी सरकार यद्यपि कठोर और निरंकुश थी, परन्तु वह निरंकुशता एक ऐसे नियमनिष्ठ और योग्य शासक की निरंकुशता थी, जो अपनी प्रजा को सताती नहीं, बल्कि उसका पालन-पोषण करती है। क्योंकि उसी प्रजा पर तो आखिर उसकी भावी उन्नति और युद्धो की विजय निर्भर थी। वास्तव में वह उन्ही लोगो के साथ निर्दयता का व्यवहार करता था, जिन्हे वह अपना शत्रु समझता था।"†

---

* मूर लिखित टीपू सुलतान के साथ किये गये युद्ध की कथा पृ० २०१

† Dirom's "Narrative P. 249

पर यह मान लेना भी एक बड़ी भारी भूल होगी कि लोगों की इस सम्पन्न अवस्था का सारा श्रेय हैदर या उसके बेटे को ही है। उनके पचास वर्ष का अल्प शासन-काल इतने बड़े काम के लिए नगण्य-सा था। इस काम की नींव हैदर से पूर्व के हिन्दू राजाओं ने डाली थी। जिन्होंने बहुत सी बड़ी-बड़ी नहरें बनवाई थीं, जो मैसूर राज्य को कई भागों मे बाँटे हुए हैं। इनकी सिंचाई के कारण किसानों के खेतो की पैदावार निश्चित और विपुल हो गई है।*

नन्दनवन की शोभा

अंगरेजी सरकार और उसका सबसे बड़ा प्रतिद्वन्दी हैदरअली भारतवर्ष के राजनैतिक रंग-मंच पर एक ही साथ अवतीर्ण हुए। जिस वर्ष हैदरअली ने मैसूर में वहां के असली राजा से राज्य छीन कर, अपना राज्य स्थापित किया था, उसी वर्ष मुगल-साम्राज्य का सब से अधिक मूल्यवान और चमकता हुआ रत्न बङ्गाल, हमारे कब्जे में आया। यद्यपि बङ्गाल उस समय मरहठो के एक ताजे

---

* मैसूर की कितनी ही नहरें तो इतनी बड़ी हैं, जिनमें व्यापारी नौकाएँ तक आ जा सकती हैं। उनको बड़े ही कौशल के साथ पहाड़ियों और कभी कभी खोहों के ऊपर से ले गये हैं, जहां ढाल इतना कम है कि पानी भी मुश्किल से बह सकता है। वे उस सारी जमीन को सींचती हैं जो उनके और नदी के बीच में पड़ती है। ये नहरें बहुत पुरानी है, श्रीरंगपट्टम को जो नहर पानी देती है वह इन सब से अर्वाचीन है। वह शिवदेवराज ओवादार के द्वारा बनाई गई थी और सन् १६९० में समाप्त हुई थी। राज्य के शासन सम्बन्धी कई दीवानी क़ानून भी इन्होंने ही बनाये हैं।

आक्रमण की मार से सम्हल नहीं पाया था, फिर भी क्लाइव ने इस नवीन प्राप्त देश को "अटूट सम्पत्ति से परिपूर्ण" एवं ऐसा देश बताया है* जो अपने स्वामियों को संसार मे सब से अधिक सम्पत्ति शाली बनाये बिना रह नहीं सकता। मि०मैकाले का कहना है कि मुसलमान अत्याचारी शासकों और मरहठों की लूट-खसोट के रहते हुए भी पूर्वीय देशों मे बङ्गाल, "नन्दनवन" यानी अत्यधिक समृद्धि-शाली प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध था†। उसकी जन संख्या बहुत बढ़ गई थी। बंगाल के अन्न की पैदावार इतनी बढ़ी चढ़ी थी कि दूर दूर के प्रान्त बङ्गाल के छलकते हूए अन्नागारों से अपना पेट पालते थे। इसके अतिरिक्त लण्डन तथा पैरिस के उच्चतम घरानों की महिलायें बङ्गाल के करघों पर बुने हुए नाजुक महीन कपड़ों से अपना तन ढकती थीं।

बंगाल में सतयुगी शासन

भारतवासियों के शासन मे बंगाल की स्थिति कैसी थी इसका वर्णन एक और दूसरे लेखक ने भी किया है वह यदि भारतवर्ष में अनेक वर्षों तक न रहा होता और इस विषय से वह भलीभाँति परिचित न होता तो हम उसकी बात को बनावटी और

---

* क्लाइव का जीवन चरित्र।

† उस जमाने में लोगों के पास कितना धनरहता था इसके प्रमाण में एक ही उदाहरण देना काफी होगा। सन १७४२ की मराठों की चढ़ाई में बंगाल की राजधानी मुर्शिदाबाद के जगतसेठ की दूकान लूटी गई। जिसमे नगद २५,००,००० मुद्राएँ मराठों को मिली। डफ लिखित मराठों का इतिहास खंड २ पृष्ठ १२।

अत्युक्ति पूर्ण समझते। मि० हालवैल कहते हैं कि "वास्तव में इन लोगो को सताना एक बड़ी भारी निर्दयता होगी; क्योंकि इस प्रान्त मे प्राचीन भारतीय-शासन की सुन्दरता, पवित्रता, धार्मिकता, नियमितता निष्पक्षता और प्रबन्ध की कठोरता के चिन्ह अभी तक पाये जाते हैं। यहां के लोगो की सम्पत्ति और स्वतंत्रता सुरक्षित है। यहां खुली या इक्की दुक्की लूट-मार और डकैती का नाम तक नहीं सुना जाता। मुसाफिरो की रक्षा को सरकार अपना प्रधान कर्तव्य समझती है। उनकी रक्षा के लिए सरकार की ओर से, एक स्थान से दूसरे स्थान तक सिपाही मिलते हैं। फिर चाहे उनके पास कोई कीमती माल हो चाहे न हो। उनकी रक्षा और उनके ठहराने की जिम्मेदारी भी इन्हीं सिपाहियो पर होती है। एक मंजिल के सिपाही दूसरी मंजिल पर पहुँचने पर मुसाफिर को, बड़े आदर, और उदारता पूर्वक दूसरी मंजिल के सिपाहियो के सुपुर्द कर देते हैं। ये सिपाही, मुसाफिर से उसके साथ पिछली यात्रा में सरकारी सिपाहियों द्वारा किये गये व्यवहार के विषय मे कुछ पूछ-ताछ करते, तथा उन सिपाहियो को मुसाफिर के साथ अच्छा व्यवहार करने और मय सामान के उसे अपनी रक्षा मे लेने का दाखला देकर छुट्टी दे देते थे। यह प्रमाणपत्र या दाखला पहली मंजिल के प्रधान अफसरों को दिया जाता था और अपने यहां उसकी लिखा-पढ़ी करके राजा को नियमित रूप से इस बात की रिपोर्ट भेजा करते थे।"

"इस प्रकार मुसाफिर के सफर का प्रबन्ध किया जाता है। अगर वह केवल सफर करता है तो उसके खाने-पीने, सवारी तथा माल-असबाब की ढुवाई का खर्च उसे कुछ नहीं देना पड़ता।

परन्तु बीमारी और आकस्मिक घटना को छोड़ कर यदि वह किसी स्थान पर तीन दिन से अधिक ठहरता है. तो उसे वहां अपना खर्चा देना पड़ता है। अगर इस प्रांत में किसी की कोई चीज़, मसलन रुपये-पैसो की थैली या अन्य कीमती चीज़ें गुम जाती हैं तो पाने वाला उन्हे नज़दीक के किसी पेड़ पर टांग देता है, और उसकी सूचना पास की पुलिस-चौकी मे कर देता है। और चौकी का पुलिस अफ़सर ढोल पिटवाकर उसकी सूचना सर्व साधारण से करवा देता है।"*

शासन-नीति दया शील होने के कारण और उस पर बुद्धि तथा दूरदर्शिता के साथ अमल होने के कारण ढाके का प्रान्त समृद्धि शाली था। प्रत्येक भाग मे खेती होती थी और उसके निवासियों के आराम तथा आवश्यकता की सामग्री वहां काफी तादाद में पैदा होती थी। लोगों को निष्पक्ष न्याय मिलता था। वहां के सूबा गुलाब अलीखां और जसवन्तराय के उज्वल चरित्र ने उनके स्वामी सरफ़राजखां के शासन के लिए अच्छा नाम पैदा किया था जसवन्त राय ने नवाब अलीखां से ही शिक्षा पाई थी। और नवाब अलीखां के चरित्र की पवित्रता, ईमानदारी, काम करने की अथक लगन आदि गुणों को उसने अपने चरित्र मे ढाला था। इस तरह उसने शासन-प्रबन्ध की एक ऐसी पद्धति का अध्ययन किया था, जिसके द्वारा जनता के आराम और सुख की वृद्धि हो सके। उसने व्यापार के एकाधिकार को नष्ट कर दिया था और अन्न-कर को उठा दिया। †

---

* Holwelts Tractys Upon India

† स्टयूअर्ट लिखित बंगाल का इतिहास पृ० ५२.

बङ्गाल की यह अवस्था अलीवर्दीखां के शासन-काल मे थी। अलीवर्दीखा "ब्लेक होल" की स्मृति के सम्बन्ध में बदनाम सिराजुद्दोला का पूर्वाधिकारी और नाम मात्र के लिए दिल्ली के बादशाह का गर्वनर था। यद्यपि उसका चरित्र अच्छा नहीं था और उससे कुछ घृणित कुकृत्य भी बन पड़े थे, परन्तु फिर भी उसके शासन-काल में देश की बहुत बड़ी उन्नति हुई थी। उसने अपने अनेक योग्यतर सम्बन्धियो तथा दोस्तों को राज्य के जिम्मेदारीपूर्ण पदों पर नियुक्त कर रक्खा था। पर अगर उनमें से कोई असावधानी या अत्याचार करता हुआ पाया जाता तो वह उसे तुरन्त बरखास्त कर देता। योग्यता और उत्तम चरित्र ही उसके लिए प्रमाण-पत्र थे। अपनी सारी प्रजा को वह एक ही ईश्वर के पुत्र-पुत्री समझता था और हिन्दुओं को मुसलमानों के बराबर का ही स्थान देता था, और मंत्री-पद के लिए सदा हिन्दुओं को ही वह चुनता। फौज तथा मुल्की शासन के काम में ऊँचे ऊँचे पदो पर भी वह हिन्दुओ को नियुक्त करता। इस लिए कोई आश्चर्य की बात नही, कि हिन्दुओ ने उसको तथा उसके परिवार की बड़े उत्साह और स्वामि-भक्ति के साथ सेवा की। उसके शासन-काल में प्रान्त से वसूल किया गया कर देहली के सुदूरस्थ खजाने को भरने की अपेक्षा वहीं पर खर्च कर दिया जाता। यह एक बहुत बड़े लाभ की बात थी, और यही कारण था कि उसके राज्य-काल में प्रजा इतनी धन्य-धान्य पूर्ण थी। उस समय समृद्धि, शान्ति और व्यवस्था का सर्वत्र साम्राज्य था। प्रान्त के किसी सुदूरस्थ कोने से किसी कट्टर और बागी जमीदार के कभी कभी के बखेड़े को छोड़कर, प्रजा

की गहरी और सार्वभौम शान्ति मे कभी विघ्न पड़ता ही नही था ।*

सिर्फ़ दस वर्ष में कालि !

परन्तु अंग्रेजी शासन मे आने के दस वर्ष के भीतर ही वङ्ग प्रदेश की स्थिति मे भारी परिवर्तन हो गया था ।

मि० मैकाले का कहना है कि "कुछ समय तक तो बङ्गाल से आने वाला प्रत्येक जहाज बड़े भयानक समाचार लाया करता था । प्रान्त का आन्तरिक कुशासन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। ऐसे सरकारी नौकरो मे क्या आशा की जा सकती थी, जिनके सामने लार्ड क्लाइव के शब्दों मे ऐसे प्रलोभन थे, जिनका प्रतिकार, रक्त और मांस का बना हुआ यह शरीर किसी प्रकार भी नहीं कर सकता था ? उस समय भारत-स्थित अंगरेजो के हाथो मे दुर्दमनीय शक्ति थी, और वे उत्तरदायी थे एक ऐसी पतित, उपद्रवी, और अशान्त कम्पनी के प्रति, जिसे यहां की पूरी खबरें मिलती ही नहीं थी । कैसे मिलती ? वह इतनी दूर थी, कि उसके पास यदि कोई समाचार भेजा जाता तो उसके पहुँचने और उत्तर आने मे डेढ़ साल से भी अधिक समय लग जाता । इसका फल यह हुआ था कि क्लाइव के चले जाने के बाद पांच वर्ष में बङ्गाल में अंग्रेजो का कुशासन उस चरम सीमा तक पहुँच गया था, जिसे देखकर यह आश्चर्य्य होता था, कि इतने कुशासन के होते हुए भी समाज का अस्तित्व कैसे बना हुआ है । एक रोमन राजदूत की बात है, उसने एक—

---

* स्टुअर्ट लिखित बंगाल का इतिहास

दो साल के अन्दर ही एक प्रान्त से इतना धन चूँस लिया कि जिससे उसने कैम्पेनिया नदी के किनारे नहाने के लिए घाट और रहने के लिए संगमरमर के महल बनवाये, और वह अन्त तक उनकी शान-शौकत और चमक-दमक को कायम रख सका। उसने इतना धन खींच लिया था कि जिससे वह हमेशा उत्तमोत्तम शराब पीता था, और मांस खाता सो भी गाने वाली चिड़ियों का ही। विदूषकों की एक फौज की फौज और जिराफो के झुण्ड के झुण्ड वह रखता था। एक स्पेनिश वाइसराय जिसने मैक्सीको और लीमा पर अनेक और अभूत पूर्व अत्याचार किये थे, वहां की जनता के शापों को वहीं छोड़कर वह अपनी जन्म-भूमि मैड्रिड मे सोने-चांदी के काम से चमकती हुई गाडियां, बड़े बड़े घोड़े, जिनके खुर चांदी से मढ़े हुए थे, लेकर लौटा था। पर इन दोनो की यह सब लूट-खसोटें बङ्गाल मे पांच वर्ष के अन्दर की गई इस लूट खसोट के सामने न-कुछ थी। हां, कम्पनी के कर्मचारियों के अन्दर अनेक अवगुण तो थे परन्तु निर्दयता नही थी। लेकिन अनीति से धनवान होने की उन्हें बड़ी उत्सुकता थी। और इसने जो बुराइयां उनके अन्दर पैदा कर दीं वे निरी निर्दयता से न होतीं। उन्होंने अपने बनाये नवाब मीरजाफर को गद्दी से उतार कर उसकी जगह पर मीरकासिम को सिंहासनारूढ़ कर दिया था।

लेकिन मीरकासिम योग्य और निश्चयी था। और यद्यपि वह स्वयं अपनी प्रजा पर अत्याचार करने का इच्छुक था, परन्तु वह अपनी प्रजा को उस अत्याचार से पिसते हुए नही देख सकता था कि जिससे उसे कोई लाभ न हो। बल्कि जिससे उसकी आय के सोतेपर ही कुल्हाड़ी पड़ती हो। इसी लिए अंग्रेजों ने

मीरकासिम को भी गद्दी से उतार कर उसकी जगह पर मीर-जाफ़र को फिर बिठा दिया। मीरकासिम ने इसका बदला एक ऐसा हत्या काण्ड करके लिया कि उसके सामने "ब्लैक होल" की क्रूरतायें भी मात हो गई, और इसके पश्चात् वह अवध के नवाब की राजधनी मे भाग गया। इन सारी क्रान्तियो मे गद्दी पर बैठने वाला नया नवाब अपने से पहले शासन करनेवाले नवाब के खजाने में जो कुछ भी उसे मिलता उसे, अपने विदेशी मालिकों के साथ मिलकर बांट लेता। उसके राज्य की बहु संख्यक जनता उन लोगों के हाथ का शिकार बन जाती, जो उसे गद्दी पर बिठाते और फिर उतारने की भी शक्ति रखते थे। कम्पनी के कर्मचारियों ने अपने मालिको के लिए नहीं, प्रत्युत अपने लिए लगभग समस्त आन्तरिक व्यापार का एकाधिकार प्राप्त कर लिया था। वे इस देश के निवासियो को मंहगा खरीदने तथा सस्ता बेचने के लिए बाध्य करते थे। देशी शासको के कर-विभाग के अधिकारियों अदालतों और पुलिस का वे बड़ी निरंकुशता के साथ अपमान करते। क्योकि उन्हे सजा का कोई डर न था। अपनी रक्षा में उन्होंने कुछ ऐसे देशी गुण्डे रख छोड़े थे जो प्रान्त भर मे घूमते और जिस स्थान पर पहुँचते उसे लूट लाटकर प्रजा पर आंतक का साम्राज्य फैला देते। कम्पनी मे काम करने वाले प्रत्येक शख्स के नौकरो की पीठ पर कम्पनी की सारी शक्ति रहती थी। इस प्रकार कलकत्ते मे तो विपुल सम्पत्ति इकट्ठी कर ली गई, तहां दूसरी ओर तीन करोड़ भारतवासियो को दुरवस्था की चरम सीमा को पहुँचा दिया गया था। वे बहुत दिन से अत्याचार सहने के अभ्यासी अवश्य थे, परन्तु इस प्रकार के अत्याचार के

नहीं । कम्पनी के छोटे से छोटे नौकर से भी वे इतना डरते जितना सिराजुद्दौला से भी नहीं । अपने पुराने शासकों के समय में उनके पास कम से कम एक उपाय तो था । जब बुराई असह्य हो जाती, तब लोग बलवा करके सरकार को नष्ट भ्रष्ट तो कर सकते थे । परन्तु अंगरेजी सरकार ने इस तरह की गुंजाइश नहीं रक्खी थी । जंगलियों की घोर निरंकुशता के साथ-साथ यह तो उन सारी शस्त्र-सामग्री से सुसज्जित थी जो आधुनिक सभ्यता उसे दे सकती थी ।†

मैसोर की शासन-व्यवस्था ।

पुर्णैया के सुप्रबन्ध के कारण ही मैसूर राज्य की, लगान से होने वाली आमदनी में इतनी वृद्धि हो सकी है । उन्होंने तालाबों और नहरों की मरम्मत करादी है, अनेक सड़कें और पुल बनवा दिये है, परदेशियों को मैसूर राज्य मे आने तथा वहां बस जाने के लिए हर प्रकार का उत्साह प्रदान किया है, और अपने राज्य के अन्दर खेती की उन्नति तथा जन-साधारण की दशा सुधारने के लिए पूरा पूरा ध्यान दिया है । *

नाना फड़नवीस ।

दीवान पूर्णैया के समकालीन नाना फड़नवीस थे । नाना फड़नवीस दीवान पुर्नैया से किसी बात में भी कम न थे । इन्होंने बाजीराव के बाल्यकाल मे लगभग पचीस वर्ष तक पेशवा के

---

† लार्ड क्लाइव पर मेकाले का निबन्ध ।

* मैसोर पर सरकारी रिपोर्ट १८०५ एशियाटिक वार्षिक रजिस्टर, १८०५,

प्रदेश का शासन किया था । इस महान राजनीतिज्ञ के चरित्र के वर्णन करने का यदि प्रयत्न किया जाय तो पिछले पचीस वर्ष की मराठों के राजनैत्तिक इतिहास की घटनाओं की तफसील में पड़ना होगा । इस बीच में इन्होंने मंत्री के कर्त्तव्य का पालन जिस योग्यता से किया, उसका उदाहरण नहीं मिलता । अपने शासन काल के लम्बे और आवश्यक समय में अपने अकेले दिमाग़ के ही बल-बूते पर उन्होने ऐसे विशाल साम्राज्य के भार को सँम्हाला था जिसके अंग रूप सभ्यों के हित एक-दूसरे के विरोधी थे । एक ही साथ मे कई कामो को अपने हाथ में ले लेने की प्रतिभा, बुद्धिमानी और दृढ़ता तथा शासन की उदारता आदि अनेक विचित्र गुणों के कारण उन्होने इन असमान स्वभाव वाले लोगों को एक ही सर्व हितकारी काम में लगा दिया, जिसमें वे एक दूसरे की नीति का विरोध करने के बजाय परस्पर सहायता करने लग गये । उनकी नीति साधक प्रचुर और दूरदर्शी होती थी जिसमें विश्वास और निराशा की अति के लिए स्थान ही नहीं होता था । वे इतने प्रत्युत्पन्न मतिवाले थे, कि आने वाले प्रत्येक अनपेक्षित घटना के लिए वे तैयार रहते और फौरन उसका उपाय भी सोच लेते थे । *

मराठों के साम्राज्य मे ।

इस सुविख्यात पुरुष द्वारा दीर्घ-काल तक शासित प्रदेश का इस पुरुष की मृत्यु के कुछ ही वर्ष बाद स्वर्गीय सर जौन

---

* एशियाटिक वार्षिक रजिस्टर खंड ५ पृ० ७० स्फुट उद्धरण Vol. V. 70 miscebaneous extracts

मालकम ने निरीक्षण किया था। उसकी दशा का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं:—

"सन १८०३ मे ड्यूक ऑफ वैलिंग्टन के साथ मुझे दक्षिण महाराष्ट्र देखने का अवसर मिला था। उस प्रदेश के समान उपजाऊ भूमि और वहां की भूमि की हर प्रकार की पैदावार तथा व्यापारिक सम्पत्ति मुझे अन्य किसी दूसरे देश में आज तक कभी देखने को नहीं मिली। यहां पर मैं विशेष कर कृष्णानदी के किनारे की भूमि के विषय मे संकेत करता हूँ। पेशवाओं की राजधानी पूना, एक अत्यन्त समृद्धिशाली और उन्नतिशील व्यापारिक शहर है। बंजर और अनुपजाऊ जमीन में जितनी खेती हो सकती है उतनी दक्षिण में मैंने देखी।"*

महाराष्ट्र सल्तनत का एक बहुत बड़ा भाग मालवा कहलाता है। यह पहले समय मे और आजकल भी होल्कर घराने के शासनान्तर्गत है। मालवा और उसके कुछ शासको के चरित्र मे संबंध में हमारे पास उपर्युक्त प्रतिष्ठित दृष्टा द्वारा कुछ अनुकूल प्रमाण मौजूद हैं। वे लिखते हैं:—

"मालवा को मैने नष्ट-भ्रष्ट दशा में पाया। पचास वर्ष से अधिक समय तक उस सुन्दर भूमि में मरहठों की फौजो का अधिकार रहने से तथा पिंडारी और भारत की अन्य लुटेरी जातियो से मालवे की बड़ी बरबादी हुई थी।

---

* कमिटी ऑफ कॉमन्स, के सामने दिये गये बयान से, सन् १८३२ पृ० ४१।

Ev.dence Before Cmmittee of Commons, 932

इस अवस्था मे दूर से हम ऐसे देशो की अवस्था के संबंध मे जो कल्पना करते हैं उसमे और उनकी प्रत्यक्ष आंखों देखी अवस्था मे अन्तर था। उसे देख कर मैं बड़ा चकित हुआ। मुझे इस प्रदेश मे फौजी और मुल्की शासन के सब अधिकार प्राप्त होने से, सरकारी कागज़ातो तथा अन्य दूसरे साधनो द्वारा, उसकी वास्तविक दशा को अध्ययन करने का पूरा अवसर मिला। अतः जिस समय मैंने अपने काम को हाथ मे लिया उस समय मुझे तो सचमुच यह पूरा विश्वास था कि यहां पर व्यापार का नाम-निशान भी न होगा और ऐसे प्रान्त मे, जो कि बहुत लम्बे समय तक, अपनी भौगोलिक परिस्थिति के कारण पश्चिमी भारत के समृद्धप्रान्त और हिन्दुस्तान के समस्त उत्तर-पश्चिमी प्रान्त तथा सागर और बुन्देलखण्ड के बीच होनेवाले व्यापार का मध्यवर्त्ती केन्द्र था; अब वीरान हो रहा होगा और वहां वह अपनी साख तक खो चुका होगा। परन्तु मैं तो यह देख कर दंग रह गया कि उज्जैन तथा दूसरे शहरो से राजपूताना, बुन्देल-खण्ड, युक्त प्रान्त और गुजरात का जहां पर कि पहली श्रेणी के सेठ-साहूकार बड़ी-बड़ी रकमो का व्यापारिक लेन-देन चल रहा था। यहां चरित्रवान तथा बड़ी साखवाले व्यापारी और साहूकार बसते थे। एक देश का माल यहां होकर दूसरे देश को जाने के अलावा, यहां पर बीमे का जो कि सारे भारतवर्ष मे फैला हुआ था यहां काम भी बराबर जारी था ? इसमें बड़े-बड़े सेठ साहूकार शामिल थे। हां, खतरे के समय किश्त की रकम अवश्य बढ़ जाया करती थी। हमारे शस्त्रास्त्रो द्वारा शान्ति स्थापित हो जाने के बाद मालवा की सरकार को केवल इसी बात की आव-

श्यकता रह गई थी कि वहां के निवासी अपने देश को वापिस लौट आवें। सभी भारतीयो की भाँति मालवा के निवासियों में भी अपने देश के प्रति प्रेम था। अत शान्ति स्थापित होते ही वे तुरन्त वापस आकर बस गये। हमने अपने शस्त्रास्त्रों के बल से वहां के पुराने नरेशो के राज्य की पुन स्थापना कर दी थी। हम बाहरी आक्रमणो से इनकी रक्षा करते थे, परन्तु अपने आन्तरिक शासन मे वे बिलकुल स्वतन्त्र थे। लेकिन मेरा इस बात मे कतई विश्वास नहीं है कि देशी नरेशों के सीधे शासन द्वारा इस देश में कृषि और व्यापार की जो उन्नति हुई है, उससे अधिक उन्नति होना तो दूर रहा, उसके बराबर उन्नति भी हमारे सीधे शासन द्वारा वहां हो जाती। दक्षिणी महाराष्ट्र प्रान्तो की समृद्धि के विषय में तो मैं पहले ही लिख चुका हूँ। इसलिए यदि यहां पर मैं बाजीराव के पिछले कुछ वर्षों के कुशासन से पूर्व की अवस्था का वर्णन करूँ तो मुझे यही कहना पड़ेगा कि हमारे शासन मे वहां के व्यापार और खेती की इतनी उन्नति कदापि नहीं हो सकती। परन्तु हमारे शासन मे उन्हें जो सब से बड़ी नियामत प्राप्त है, वह यह है कि हमारी आधीनता में युद्धो के कष्टो से उनकी रक्षा हो गई है। इस आनन्द का लाभ सब लोग समान रूप से उठाते हैं। लेकिन मुझे यहां पर निस्संकोच होकर यह भी कह देना चाहिए कि, पटवर्द्धन घराने के आधीन तथा कुछ अन्य नरेशो द्वारा शासित कृष्णातट के प्रदेश भारतवर्ष के अन्य किसी भी प्रान्त के मुक़ाबले मे, व्यापार तथा कृषि मे सब से अधिक उन्नतावस्था मे है। इसके कई कारण हैं। एक तो उनकी सुव्यस्थित शासन-पद्धति है। यद्यपि वहां पर, कभी-

कभी अनुचित रूप से रुपया वसूल कर लिया जाता होगा, परन्तु साधारणतया उनका शासन सौम्य और पितृवत् है। दूसरा कारण है हिन्दुओं का ज्ञान और खेती, तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाले सभी कामों में उनकी रुचि-बल्कि श्रद्धा, तीसरा कारण है उनकी समझदारी अथवा शासन के अनेक विभागों में कम से कम हम से अधिक योग्यता पूर्वक काम करने की शक्ति। और खास कर पूँजीपतियों को उत्साहित करके तथा गरीबों को सूद पर रुपया देकर शहरों और देहातों को समृद्ध बनाने में वे बहुत कुशल हैं। इसका एक कारण यह भी है और वह सब से अधिक महत्त्व-पूर्ण है कि जागीरदार लोग अपने जागीर में ही रहते हैं। इन प्रान्तों का शासन इन्हीं उच्चकोटि के स्थानीय आदमियों द्वारा होता है। जो वही काम करते-करते जीते और मरते हैं। इन जागीरदारों की मृत्यु के पश्चात उनकी जागीर के मालिक ाय. उनके पुत्र-पौत्र और सम्बन्धी हो होते हैं। अगर संयोगवश ये लोग कभी-कभी निरंकुशता-पूर्वक प्रजा से धन घसोट भी लेते हैं, तो उनका सारा खर्च, और उन्हें जो कुछ प्राप्त होता है वह, सब उनके प्रान्त की सीमा के अन्दर ही रहता है। परन्तु उस प्रदेश को समृद्धिशाली बनाने के अनेक कारणों में से सर्वश्रेष्ठ कारण यह है कि वहां पर सब वर्ग के लोगों को रोज़गार मिलता है और देहातों तथा संस्थाओं को निश्चित रूप से सहायता दी जाती है। जिसकी कि हमारी शासन प्रणाली में कहीं गुंजाइश ही नहीं है। ❀

❀Sir John Malcolm

अहल्याबाई-पवित्रतम शासक

"अपने राज्य के आन्तरिक प्रबन्ध में अहल्याबाई की सफलता अद्भुत थी। उसके राज्य को बाहरी आक्रमणों से जो मुक्ति और निश्चिन्तता प्राप्त थी उसकी अपेक्षा देश की निर्विघ्न आन्तरिक शान्ति अधिक उल्लेखनीय है। ऐसी शान्ति-पूर्ण अवस्था पैदा होने का कारण था शान्तिशील. उपद्रवी लुटेरों वर्ग के प्रति अहिल्याबाई का यथायोग्य व्यवहार। शान्तिशील वर्ग के प्रति उसका प्रेम-पूर्ण व्यवहार रहता था। परन्तु उपद्रवी और लुटेरे वर्ग के प्रति उसका व्यवहार कठोर, किन्तु विचार-पूर्ण और न्यायी होता था अपनी प्रजा की समृद्धि को बढ़ाना उसके जीवन का सर्वप्रिय उद्देश था। हमे पता चला है कि जब कभी वह साहूकारो, व्यापारियो और किसानो को सम्पन्न देखती तो बड़ी प्रसन्न होती। उनके धन को बढ़ता हुआ देख कर, उनसे खसोटना तो एक ओर, वह तो उन्हे अपनी कृपा और रक्षा का और भी अधिक अधिकारी समझती।''' ' अहल्याबाई के आन्तरिक शासन नीति और उस पर अमल करने के लिए काम मे लाये गये उपायों का विस्तार पूर्वक वर्णन करना तो असम्भव है। संक्षेप मे यहां पर इतना कह देना ही पर्याप्त है कि मालवे की प्रजा एक मत होकर अहल्याबाई को सुशासन की साक्षात् प्रतिमा समझती है।''''''उसने कितने ही किले बनवाये थे। और विंध्याचल मे जाम के पहाड़ पर तो बड़े परिश्रम और धन व्यय के साथ, एक सड़क बनवाई थी। जहां पर पहाड़ की

चढ़ाई बिलकुल सीधी है। उसके समकालीन भारतीय नरेश, उसके राज्य पर चढ़ाई करना, अथवा किसी दूसरे के द्वारा उसके राज्य पर आक्रमण होते देखकर उसकी रक्षा के लिए न दौड़ पड़ना तो महापाप समझते थे। सब लोग उसे इसी दृष्टि से देखते थे। पेशवाओं से लेकर दक्खिन के निजाम और टीपू सुल्तान तक उसे उसी श्रद्धा और आदर की दृष्टि से देखते थे। और हिन्दू तथा मुसलमान दोनों एक साथ होकर ईश्वर से उसकी चिरआयु और अभ्युदय के लिए प्रार्थना करते थे। अत्यधिक गंभीरता पूर्वक उसके चरित्र पर दृष्टिपात करने पर भी प्रतीत होता है कि वह एक अत्यन्त पवित्र और आदर्श शासक थी। उसके जीवन से यह उदाहरण और शिक्षा मिलती है कि मनुष्य को अपने सांसारिक कर्त्तव्यों का पालन करते समय किस प्रकार उनके लिए अपने को ईश्वर के समक्ष जिम्मेदार समझना चाहिए।"*

महाराष्ट्र प्रान्त के छोटे-छोटे देशी राज्यों के समूह में बरार के राजा भी थ। इनके राज्य में, प्रजा की वास्तविक दशा के सम्बन्ध में एक यूरोपियन यात्री ने अपनी आंखो देखा यह वर्णन लिखा है :—

"उस प्रान्त की सम्पन्नावस्था का पता उसकी राजधानी पर एक दृष्टिपात करने ही से चल सकता था। लेकिन बाद में जब हमें उस प्रान्त में होकर यात्रा करनी पड़ी तब तो वहां की प्रजा की समृद्धावस्था के विषय में और भी निश्चय हो गया। उसे देख कर मुझसे उस प्रदेश के प्राचीन राजाओं की प्रशंसा किये

---

*मालकम लिखित मध्यभारत का इतिहास खण्ड १ पृ० १७६-९२।

बिना नहीं रहा जाता । उस प्रदेश में नर्मदा नदी इतनी गहरी नहीं कि जल मार्ग से वहां व्याहार होसके । यह प्रदेश उसके लाभ से भी वे वंचित था । भीतरी व्यापार भी अधिक नहीं था । परन्तु प्रजा पालक नरेशो की छत्र-छाया मे वहां के किसान खूब खेती करते थे, उनके घर सदा स्वच्छ रहते थे, वहां पर अनेक बड़े-बड़े मन्दिर, तालाब, तथा अन्य सार्वजनिक लाभ की अनेक चीजें थी । वहां के नगरो का विस्तार, खेतो का साल मे कई बार बोया जाना, आदि बातें निश्चय ही स्पृहणीय समृद्धि के चिन्ह हैं । इसका सारा श्रेय यहा की पहली सरकार को है । क्योंकि मरहठा नरेश तो अपने सुशासन के लिए अत्यधिक प्रशंसा के पात्र हैं । पहले शासन के लिए यह बात काफी प्रशंसा के योग्य है कि सागर नरेश के अपने बीस साल के शासन काल में और बरार के राज के अपने चार वर्ष के राज-काल मे भी प्रदेशों की समृद्धि को कोई अधिक हानि नही पहुँची थी ।"*

बरार प्रदेश में यात्रा करनेवाले एक दूसरे यात्री का कहना है कि "अब हमने एक हरे-भरे सम्पन्न प्रदेश मे से होकर अपनी यात्रा प्रारम्भ की । आस-पास के पहाड़ो से निकलनेवाले नालो के जल से खेत भली प्रकार सिचे हुए थे । इस प्रदेश मे जंगल नहीं थे, चारों ओर गांव ही गांव थे और जगह-जगह पानी से भरे हुए तालाब और दरख्तों के झुण्डो के कारण भूमि बड़ी सुन्दर दिखाई देती थी । हमारी पहली सफर की कठिनाइयाँ अब बिलकुल नहीं रहीं । और इस प्रदेश की यात्रा मे

*एशियाटिक सोसायटी के एक सभ्य के "१७९८ मे मिर्जापुर से नागपुर का प्रवास" से एशियाटिक वार्षिक रजिस्टर, स्फुट ट्रैक्ट पृ० ३२

हमे जो आनन्द मिला उसका वर्णन करने की अपेक्षा उसकी कल्पना करना ही अधिक आसान है। इस प्रदेश में महाराष्ट्र-सरकार के सुशासन के कारण सफर मे हमारे साथ हर प्रकार का आदर पूर्ण व्यवहार हुआ। यहां पर हमे हर प्रकार का अन्न काफी मात्रा मे बहुत ही सस्ते मूल्य पर मिला जो कि यहां की उपजाऊ भूमि मे पैदा होता था। और यद्यपि यहां पर भीतरी व्यापार के लिए सरकार की ओर से बहुत ही कम प्रोत्साहन मिलता था, क्योंकि सरकार सड़को की तरफ़ बिलकुल ध्यान नही देती थी, परन्तु फिर भी फसल के समय पर यहां से इतना माल बाहर जाता था कि करीब एक लाख बैल उसके ढोने मे लगे रहते थे।*"

राजपूत राज्य

मरहठों के राज्य से अब हम राजपूत राज्यो की ओर आते है। और यहां भी हम एक प्रत्यक्ष द्रष्टा का ही निम्न लिखित बयान देते हैं .. "अवध के नवाब के किसानो की खेती के मुकाबले मे मुझे अंग्रेजी राज्य के किसानो की खेती सदा उन्नत अवस्था में दिखाई पड़ी। परन्तु यह कह देना केवल न्याय युक्त ही है कि हिन्दू राजाओं द्वारा शासित छोटे-छोटे स्वतंत्र राज्यों मे, कम्पनी द्वारा शासित प्रदेशो से खेती की पैदावार कहीं अधिक अच्छी थी। यहाँ के तेजस्वी स्वाश्रयी किसानो को देखकर यही प्रतीत होता था कि राज्य मे उनके अधिकारो और सत्वों का अधिक ख्याल रक्खा जाता है। सन् १८१० ई० में जब कम्पनी की फौज ने अंग्रेजी प्रदेश से बाहर कूच किया, तो अंग्रेजी सेना

---

* एशियाटिक एन्युअल रजिस्टर, खण्ड २, स्फुट ट्रैक्ट पृ० १६६।

ने टिहरी के राज्य में लगभग दो मास तक विश्राम किया। उस प्रदेश की समृद्धि और सम्पन्नावस्था को देख कर सारी फौज आश्चर्यान्वित हो गई थी।"❀

"रामपुर राज्य से गुजरते हुए उस प्रदेश की खेती की अच्छी अवस्था हमारी नजर से छिप नही सकी। आस-पास के प्रदेशों से यहाँ की खेती कहीं अच्छी अवस्था मे है; मुश्किल से हीं कहीं पर खेती का कोई ऐसा हिस्सा मिलता जिसको ठीक साल-सम्हाल न हो। यद्यपि मौसम अनुकूल नही था, फिर भी सारे प्रदेश मे फसल से खेती लहलहाती हुई दिखाई देती थी। वर्त्तमान रीजेण्ट के बारे मे हमे जो वर्णन मिला है उससे हम किसी प्रकार भी इस नतीजे पर नहीं पहुँच सकते कि उनके किसी व्यक्तिगत उद्योग से देश इस समृद्धावस्था को पहुँचा है। अत हम इस समृद्धि के असली स्रोत को जानने को उत्सुक हैं। और यह मालूम कर लेना चाहते हैं कि आया इस उन्नति का कारण किसानों को जिन शर्तों पर जमीन दी गई थी वह हैं या ज़मीन सम्बन्धी व्यवस्था मे ही कुछ ऐसी विशेष बाते थीं जिनकी ओर ध्यान देने से हमारे अंगीकृत कार्य्य मे हमे सहायता मिल सकती थी। नवाब फैजुल्लाखां के प्रबन्ध की सर्वत्र प्रशंसा थी। यह प्रबन्ध एक ऐसे सुसंस्कृत और उदार मालिक का प्रबन्ध था जो प्रजा की समृद्धि बढाने मे अपना तन, मन, धन, लगा देता था। जब बड़े-बड़े महत्वपूर्ण काम करने होते, जिन्हे कोई व्यक्ति अकेला न कर सकता, तो उस कार्य्य को सम्पादन करने के साधन उसकी

❀ ह्वाइट लिखित ब्रिटिश भारत की दशा १८२२।

उदारता और दया द्वारा प्राप्त होजाते। उसने नहरें बनवाई थी। नालो को कभी-कभी रोक कर उनके पानी से निकटवर्ती प्रदेशों की भूमि को उपजाऊ बनाया जाता था और प्रजा की रक्षा के लिए एक पितृवत् नरेश की भाँति वह सदा तत्पर रहता था। वह लोगो को उनके काम मे उत्साहित करता था, उनको लाभ-दायक काम करने की सलाह देता था और उस काम को पूरा करने मे हर प्रकार की सहायता भी देता था।

"उस प्रदेश का कुछ हिस्सा तो रुहेलो के अधीन था और कुछ हमारे अधीन। अत. हमारे अधीन प्रदेश और रुहेलो के अधीन प्रदेश की दशा का मुकाबला किया जाय और इस बात को एक तराजू मे रख कर तौला जाय कि किसके राज्य मे प्रजा को अधिक लाभ पहुँचा है, तो इस बात के विचार मात्र से ही कष्ट होता है कि भलाई का पलड़ा रुहेलो के पक्ष मे ही झुकेगा। उस प्रदेश मे, हमारे सात वर्ष के शासनकाल मे शासन-प्रबन्ध की रिपोर्ट देखने से पता चलता है कि, कर मे सिर्फ दो लाख की वृद्धि हुई है। परन्तु पार्लियामेंट मे पेश की गई रिपोर्ट को देखने से पता चलता है कि पिछले बीस वर्ष मे रुहेलखण्ड और अवध के नवाब से प्राप्त हुए जिलो की सम्मिलित आमदनी में दो लाख पौण्ड सालाना की कमी हुई है।

"हमारे आधीन प्रदेश के पड़ोसी प्रदेशो मे, अधिक पूँजी और अधिक उद्योग धन्धो से पैदा हुई उन्नतावस्था मे और हमारे अधीन प्रदेश की दशा मे जो अन्तर था वह भी हमसे। छिप सका। पड़ोसी प्रदेश को देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि इस भूमि को किसी भारी आपत्ति ने बियाबान सा

बना दिया है। लेकिन उधर राजा दयाराम और भगवन्तसिंह के अधीन प्रदेशो की दशा बड़ी अच्छी थी। यद्यपि उस साल मौसम प्रतिकूल था परन्तु वहाँ पर खेती करने के उत्तम ढंग और अधिक परिश्रम के कारण खेत हरे-भरे दिखाई पड़ते थे। यहाँ पर हमे यह बात स्पष्ट कर देना चाहिए कि ऊपर जिस पास-पड़ोस की भूमि का जिक्र किया है, वह अंगरेजी प्रदेश का वह भाग है जिससे हमारे अधिकार मे आये पूरे पाँच वर्ष हो गये थे।*

अवध के नवाब और उनके राज्य की की गई इतनी बुराइयो के बाद भी हमे अनेक विश्वसनीय प्रमाणो से पता चलता है। कि न तो नवाब का चरित्र ही उतना काला था और न उसके प्रदेश की दशा ही उतनी बुरी थी जितनी कि हमारे सरकारी अफसरो ने बताई है।

हेबर लिखते हैं कि अवध को देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और साथ ही मेरे आश्चर्य का ठिकाना भी न रहा। क्योंकि अवध की दुरावस्था और वहाँ की प्रजा के कष्टो के विषय में मैंने जो कुछ सुना था उससे तो यही अनुमान होता था कि वहाँ की आबादी बहुत कम हो गई होगी और खेती भी बहुत कम होती होगी। परन्तु यहाँ पर मैंने देखा कि खेत पूर्णतया जुते-बुये थे और आबादी इतनी काफी थी कि अगर यहाँ की प्रजा मेरे सुने गये अत्याचारो के समान ही पीड़ित होती तो यहाँ पर इतनी आबादी, इतनी अच्छी खेती और इतना उद्योग धन्धा देखने मे कदापि न आता। लेकिन कल की घटनाओ ने यह

---

* १८८२ की राजनैतिक विवरण का परिशिष्ट पृ० ३६-३७।

मानने के लिए कारण दे दिया कि यहाँ पर काफी कुशासन और अराजकता है।

वहाँ पर हमने सर्वत्र सभ्य और भले स्वभाव के आदमी पाये। वे हमारे लिए अपनी गाड़ी और हाथी आदि सड़क से एक ओर करके हमारे जाने के लिए रास्ता खाली कर देते थे। और हमारा आतिथ्य सत्कार तो उन्होंने इतना अच्छा किया, इतना अधिक स्थान हमें मिलता था जितना लण्दन मे दस विदेशियो को भी मुश्किल से मिला होगा। यहाँ के वर्त्तमान शासक साहित्य और तत्वज्ञान के प्रेमी है।

"सादतअली स्वयं एक बड़े बुद्धिमान् और गुणी आदमी थे। व्यापार को ओर उनकी विशेष रुचि थी और उसके संपादन के लिए काफी योग्यता प्राप्त कर चुके थे। परन्तु अपने जीवन के अन्तिम काल मे दुर्भाग्यवश उन्हे शराब पीने की आदत पड़ गई थी। परन्तु फिर भी उनके अधीन प्रदेश की भूमि खूब उपजाऊ थी, आबादी ६० साठ लाख थी, खज़ाने मे बीस लाख से अधिक रुपया नकद था. अर्थ-विभाग सुव्यवस्थित था, किसान लोग सन्तुष्ट और सुखी थे। दिखाने के लिए कुछ सिपाहियों और पुलिस के अतिरिक्त कोई फौज वगैरह भी न थी। प्रत्येक वस्तु पर दृष्टि पात करने से प्रतीत होता था कि यहाँ पर सुशासन के कारण प्रजा सुखी और सम्वद्ध है।

"बादशाह का यह कथन बिलकुल सत्य था कि उसके प्रदेश में खेती अत्यन्त उन्नतावस्था में है। मै भी उनके इस कथन की सत्यता का साक्षी हूँ। मुझे उनके प्रदेश में खेती को इतनी उन्नतावस्था में देखने की आशा तो कदापि न थी। लखनऊ से

लेकर सान्दी तक, (?) जहाँ पर बैठा हुआ मैं यह पंक्तियाँ लिख रहा हूँ, खूब खेती होती है और जन-संख्या उतनी ही अधिक है जितनी कि कम्पनी के अधीन अनेक प्रदेशो मे। इन सब बातो को देखते हुए मुझे यह संदेह करना ही पड़ता है कि अवध की प्रजा के कष्टों और अराजकता को बढ़ा चढ़ा कर लिखा गया है।*

"स्वाध्याय की ओर उनकी विशेष रुचि थी; और जहाँ तक पूर्वीय साहित्य और तत्वज्ञान का सम्बन्ध है, वे एक बड़े विद्वान् समझे जाते हैं। यंत्र विद्या (Mechanics) तथा रसायन शास्त्र की ओर भी उनका अधिक झुकाव है।

"हमारे जेम्स प्रथम की भाँति इन्हे न्याय-प्रिय और रहम-दिल बताया जाता है। जिन लोगो की उनके पास तक पहुँच है उन सब को वे बड़े प्रिय हैं। उन्होंने रक्त-पात या अत्याचार पूर्ण कोई काम कभी भी नही किया। इतना ही नही, लोगों का मत है कि, उनके जानते हुए भी किसी दूसरे ने भी कोई ऐसा काम नहीं किया। खर्च करने मे वे मितव्ययी नही थे, प्रजा तक उनकी पहुँच नही थी, अपने कृपा पात्रों में उनका अन्ध-विश्वास था, मिलने जुलने के भिन्न-भिन्न प्रकार के ढंग और विशेषाधि-कारों की एक बुरी लत उनमें पड़ गई थी, परन्तु यह बात कोई अस्वभाविक नही थी, यही उनकी बुराइयाँ और भूले हैं।"

लार्ड हैस्टिंगस् ने उन्हें एक ईमानदार, दयाशील और साधा-रण तथा उन्नत विचार वाला नरेश बताया है। इसी विश्वसनीय पुरुष ने देशी नरेश के अधीन काल में, भरतपुर की सम्पन्नावस्था के विषय में लिखा है :—

---

* P. 89

इस प्रदेश में यद्यपि जगलात का अभाव है, परन्तु फिर भी इधर-उधर इतने वृक्ष दिखाई पड़ते हैं कि जितने हमने पिछले बहुत दिनो से नही देखे। यद्यपि यहाँ की भूमि रेतीली है और सिंचाई सिर्फ कुओ से ही होती है लेकिन यहाँ के खेत उतने ही अच्छे जुते हुए और सिंचे हुए है जितने कि मैंने हिन्दुस्तान में दूसरी जगहो पर देखे हैं। इस समय जो फसल खेतों में खड़ी हुई है वह निहायत अच्छी है। कपास की फसल यद्यपि समाप्त हो चुकी है, परन्तु देखने से पता चलता है कि मेह बहुत अच्छी हुई होगी। सम्पत्ति के निश्चित चिह्न भी यहाँ मुझे देखने को मिले। मैंने खाँड़ के कई कारखाने देखे, बड़े-बड़े खेतों को देखा जिनमें से उसी समय गन्ने कट चुके थे। हिन्दुस्तान में यह रिवाज है कि किसान लोग आम रास्तो से जितना बन सके, उतना ही अधिक दूर रहते हैं। जिसके कारण वे मुसाफिरो और चोरो द्वारा दिये जाने वाले अनेक प्रकार के कष्टो से बच जाते हैं। परन्तु यहाँ पर मैंने इसके बिलकुल ही विपरीत पाया। गेहूँ और सरसो की हरी-हरी फसल के बीच मे होकर पतली-पतली पगडंडिया मैंने देखीं। इन पगडंडियो को चीर कर जाते हुए पानी के बराह दिखाई दिये जिनमे होकर खेत की क्यारियों में पानी जाता था।"

"आबादी तो अधिक दिखाई नही दी, परन्तु जिन गाँवो को हमने देखा वे बाहर से देखने पर अच्छी दशा मे दिखाई पड़ते थे, और मकानो की मरम्मत की हुई थी। सारा दृश्य उद्योग-धन्धे से परिपूर्ण तथा ऐसा सुहावना था कि जिसके देखने की मुझे राजपूताने मे तो बिलकुल ही आशा न थी। रुहेलखण्ड

के दक्षिणी भाग से प्रस्थान करने के पश्चात् कम्पनी के प्रदेशों में देहातों की जिस दशा का मैंने अवलोकन किया था, उससे यहाँ की अवस्था कही अधिक उन्नत थी, जिससे मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि या तो यहाँ का राजा एक आदर्श और पितृवत् शासक है, और या फिर अंगरेजी प्रदेशों में शासन-पद्धति किसी न किसी रूप में ऐसी है, जिससे कि देशी नरेशों के मुकाबिले में, अंगरेजी शासन, हिन्दुस्तान की उन्नति और सुख के लिए कुछ कम अनुकूल है।*

सतारा के प्रथम नरेश श्री प्रतापसिंह के एक उच्च चरित्र के शासक होने तथा उनके प्रदेश की सम्पन्नावस्था के विषय में स्वयं अंग्रेजी सरकार का यह प्रमाण हमारे पास है।

सतारा का राज्य

"हमारी सरकार द्वारा, समय समय पर हमें जो समाचार मिलते रहे हैं उन्हे पाकर हमे बड़ा संतोष हुआ है कि परमात्मा ने आपको जिस उच्चासन बिठाकर, आपको प्रजा को भलाई और रक्षा का जो कर्त्तव्य-भार सौंपा है, उसे आप एक आदर्श नरेश की भांति पूरा कर रहे हैं।

"श्रीमान् जिस उच्चासन पर विराजमान हैं उसी के अनुरूप श्रीमान् का व्यवहार भी रहा है, और उससे श्रीमान् के प्रदेश की समृद्धि और प्रजा के सुख, आनन्द की बराबर वृद्धि ही हो रही है। आपके इस बुद्धिमत्तापूर्ण और अनवरत उद्योग से, आपके प्रदेश और प्रजा की जो भलाई हुई है, उससे आप के

---

* Bishop Heber "Journal" Vol II P. 361

चरित्र की उच्चता का पता चलता है और साथ ही इससे हमारे हृदय मे एक अभूतपूर्व आनन्द और सतोष की भावना का संचार हुआ है। आपने अपने खर्च से, सार्वजनिक हित के अनेक कार्य्य करके जिस उदारता का परिचय दिया है, उससे हिन्दुस्तान के नरेशो और प्रजा मे आप की और भी प्रशंसा हुई है। जिसके कारण आप हमारी सराहना, आदर, और प्रशंसा के भाजन बन गये हैं।

"इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर, ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कोर्ट आफ डायरेक्टर्स ने, सर्व सम्मति से आपको एक तलवार भेजने का निश्चय किया है। यह तलवार आपको बम्बई की सरकार द्वारा भेंट की जायगी। हमें आशा है कि आप हमारी इस भेंट को आपके प्रति हमारे महान आदर और श्रद्धा का चिन्ह समझ कर प्रसन्नता के साथ स्वीकार करेंगे।"

इस प्रकार जब कि एक ओर तो इस नरेश को उसके प्रदेश की समृद्धि तथा उसकी प्रजा के सुख के लिए बधाई दी जा रही थी, तो दूसरी तीन करोड़ भारतवासियों की दशा, जो लगभग एक एक सौ वर्ष तक अंग्रेजी शासनान्तर्गत रह चुके थे, एक विश्वस्त साक्षी ने इस प्रकार लिखी है।—

"इस सत्य का प्रतिवाद या खण्डन करने का साहस कभी किसी ने नहीं किया कि बङ्गाल की इतनी दुःखद और पतितावस्था है जितनी कि किसी की हो सकती है। उनके रहने की

*Letter of the court of Directors Par, pa A. D. 1843 Ko 469 p. 1368

झोंपड़ियाँ इतनी निकृष्ट हैं कि वे किसी कुत्ते के रहने के योग्य भी नहीं समझी जा सकती। उनके वदन चिथड़ों से ढके हुए हैं और अधिकतर लोग अविराम परिश्रम करने पर भी एक वक्त का ही भोजन पैदा कर पाते हैं। बङ्गाल की प्रजा जीवन के साधारण सुखों से भी वंचित है। हमारे इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि यदि कोई उन किसानो को, जो अपने खेतों में तीस चालीस लाख को फसल हरसाल पैदा करते हैं, वास्तविक स्थिति से परिचित होगा, तो उसे जान कर उसकी आत्मा कांप उठेगी।*

अब दो में से एक बात अवश्य है। या तो ब्रिटिश सरकार को बंगाल निवासी इस भयावनी हालत में मिले। और या फिर अंग्रेजी राज्य ने ही उन्हे इस दशा को पहुँचा दिया। अगर उनकी यह दशा पहले ही से थी तो अंग्रेजी सरकार एक शताब्दी तक क्या करती रही जिससे कि वह उन्हे इस दुरवस्था से न निकाल सकी? और अंग्रेजी राज्य में ही वे इस हीनावस्था को प्राप्त हुए तो सरकार इस परिणाम की भीषणता से अपने आप को कैसे निर्दोष साबित कर सकती है? हमने गवर्नर-जनरल लार्ड कार्नवालिस को यह स्वीकार करते हुए देखा है कि उनके समय मे, जिसे साठ वर्ष हो गय "बंगाल की प्रजा बड़ी शीघ्रता से घोरतम गरीबी और दुःखदावस्था को प्राप्त होती जा रही है।" हमारे पास जो काग़जात हैं उनसे हमे यह पता चलता है कि गवर्नमेंट को "दुनिया मे सब से अधिक धनवान संघ" होना चाहिए था जैसा कि लार्ड क्लाइव ने वादा किया था। परन्तु बङ्गाल प्रदेश हमारे

---

* Marshman, Friend of India, Aprl 1st 1851

हाथ मे आते ही सरकारी खज़ाने मे एक पाई भी नही रही।❀ अकबर से लेकर मीरजाफर के ज़माने तक (सन् १८३७ तक) प्रजा से प्राप्त कर की रकम तथा प्रजा पर कर लगाने की पद्धति मे बहुत थोड़ा अन्तर रहा है। परन्तु उसके (मीरजाफर के) सिंहासनासीन होने के बाद ही ज़मीन पर लगान खूब बढ़ा दिया गया और लोगों से खसोट लेने की पद्धति पहले से कई गुना अधिक कर दी गई। कारण कि एक तो नवाब मीरजाफर को देहली के सम्राट को हरसाल एक निश्चित रक़म देनी पड़ती थी और उसे हमे भी वह रक़म देनी पड़ रही थी जिसके देने का उसने वायदा किया था। सन १७६५ से १७९० तक हमने इसके अतिरिक्त कर को वसूल करने की नीति को बराबर जारी रक्खा। इस लिए हमारे कर वसूल करने की पद्धति मे बराबर प्रयोग और परिवर्तन ही होते रहे। और हम इन परिवर्तनो से अनुभव ही प्राप्त करते रहे। लोग बहुत सी रक़म अदा ही नही कर पाते थे। कारण कि सारा देश निर्धन और खोखला हो गया था।

अंगरेजी राज्य की नया देन

गवर्नर लार्ड हैस्टिंगस् ने कहा था कि "हमारे शासन-काल मे एक नई सन्तति पैदा हो गई है। हमारे शासनान्तर्गत पैदा हुई सन्तति मे मुकदमेबाजी इतनी बढ़ गई है कि हमारे न्यायालय उतने मुक़दमों का न्याय करने मे असमर्थ हैं। लोगो का नैतिक चरित्र भी बहुत गिर गया है। अगर हमारी शासन-पद्धति

❀ Vansittart's Narrative of Events in Bengal.

में यह पाया जाय कि हमने यहाँ के लोगों के नैतिक या धार्मिक बन्धनों को ढीला कर दिया है, या हमारे कुछ व्यक्तियों ने यहाँ की पुरानी संस्थाओं के प्रभाव को नष्ट कर दिया है लेकिन उनके स्थान पर जनता को पतन से रोकनेवाला कोई प्रतिबन्धक नही लगाया, और मानव-स्वभाव के उग्रतम विकारों को खूब ढील दे दी है, तथा खानगी लोकमत या निन्दा के सम्पर्क द्वारा होनेवाले लाभ से भी लोगों को हमते वंचित कर दिया है, तो हम यह स्वीकार करने को वाध्य हैं कि हमारे क़ानूनों ने एक ऐसी स्थिति पैदा कर दो है जो हम से पुकार पुकार कर कह रही है कि हमे शीघ्र ही इस भयंकर बुराई का तत्कालिक इलाज कर देना चाहिए।"*

हमारी न्याय-व्यवस्था ने यहां के लोगो के चरित्र पर जो प्रभाव डाला उसके सम्बन्ध में यह एक गवर्नर जनरल का फैसला है। लोगों के जानमाल की रक्षा के विषय में भी इस समय वही हालत है जो अबसे पचास वर्ष पहले थी। आजकल भी इतना अन्धेर और अन्यवस्था है कि कलकत्ते के साठ-सत्तर मील इर्द-गिर्द कोई भी सम्पत्तिवान मनुष्य रात को सोने के लिए चारपाई पर जाते समय यह विश्वास नहीं करता कि सुबह होने से पूर्व ही उसका माल-टाल उससे लूट न लिया जायगा।"

यह बात हम एक अत्यन्त विश्वसनीय प्रमाण के आधार पर कहते हैं।* हमारे पास इन सब प्रमाणों के होते हुए भी

---

* Loid Hastings Minu e in Parliamen.ary papers 1827. p. 157.

कि हमारी नियत और उद्देश पवित्र थे, गवर्नर-जनरल लार्ड डब्लू बेन्टिक शब्दों में, हमारा शासन, कर, न्याय और पुलिस आदि सब विभागो में असफल रहा है।" और हम उन्नति की शेखी मारते हे—भारतवर्ष को उन्नति बनाने की !

इन पन्नों का उद्देश यह है कि हम उन लोगों की तरफ से जो स्वयं बोल नहीं सकते, यह बता दें कि वे लोग इतने काले नहीं हैं, जितना कि हमने उन्हें चित्रित किया है; और न हम ही उतने सफ़ेद हैं जैसा कि हम अपने को बताते हैं। उनकी गवर्नमेंट और संस्थायें भी उतनी दूषित नहीं हैं; और न हमारी ही उतनी पूर्ण हैं जैसा कि हमारा दावा है। हमने बड़े-बड़े पोथों में "भारत की उन्नति का इतिहास" जो लिखा है उसके मानी सिर्फ यही हैं कि उन्नीसवीं शताब्दी की हिन्दुस्तान की ईसाई सरकार पन्द्रहवीं और सोलहवीं सदी की मुसलमान या हिन्दू सरकारों से अच्छी है। यह हमारी कोरी बहानेबाजी है। अपनी इस कोरी डींग का समर्थन अंगरेजों से पहले भारत का शासन करने वालों के चरित्र और कार्यों की निन्दा तथा अपने कार्यों की खूब बढ़ा-चढ़ा प्रशंसा करके ही हम करते हैं। परन्तु इतना करने पर भी यह संदेह तो पूर्णतया बना ही रहता है कि आया भलाई का पलड़ा वास्तव में हमारी ही ओर झुकता है या नहीं।

---

* Friend s of India, 28th August 1851.

देशी नरेशों तथा अंग्रेजी शासन के विषय में कुछ सम्मतियां इस प्रकार हैं :--

कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स—अपने ८ फरवरी सन् १७६४ ई० के एक पत्र में, जो बङ्गाल के लिए लिखा गया था, लिखता है:—

"यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सारे झगड़े की एक बहुत बड़ी जड़ कंपनी के नौकरों तथा उनके गुमाश्ताओं का अनुचित रूप से, स्वच्छन्दता पूर्वक निजी व्यापार करना है।

"हिन्दुस्तान के आन्तरिक व्यापार के सम्बन्ध में आप के विचारों को जान कर हमारे सम्मुख अत्यन्त निर्दयतापूर्ण अत्याचार का दृश्य उपस्थित हो गया है।"

"जिस अव्यवस्था और अशान्ति को हम देख रहे हैं वह क्योंकर पैदा हुई ? हमारी लूट खसोट और विलासिता से।"

लार्ड क्लाइव—के थोमास रो को लिखित पत्र से, जो उन्होंने मद्रास ता० १७ अप्रैल सन् १७६५ ई० को लिखा था।

"बङ्गाल में अंग्रेज़ लोग, संधियां भंग करने, प्रजा पर घोर अत्याचार करने और अपने को मालामाल करने के लिए एक गुट्ट बना लेने के अपराध के अपराधी हैं।"

२६ अप्रैल सन् १७६५ को बंगाल के लिए लिखे गये कोर्ट आफ डाइरेक्टरस् के पत्र से।

यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं कि लोगों की धन-तृष्णा वैसे साधन मिल जाने पर अपने को सन्तुष्ट करे और आपकी शक्ति के कल-पुर्जे अपने पद के द्वारा लाभ उठावें, और जब साधारण रिश्वत आदि से उनका पेट न भरे तो लोगों से ज़बर्दस्ती भी छीन झपट लें। उच्च-पदाधिकारियों को इस प्रकार लूटते-खसोटते देखकर उनके मातहत भी उनसे क्यों पीछे रहने लगे ? यह बुराई इतनी संक्रामक थी कि दीवानी और फौजी महकमों में फैलते इसे देर न लगी। यहां तक कि मुंशी, बदंकी और स्वतंत्र व्यापारी तक इसके कुप्रभाव से न बच सके। अभी तक खतरा गया नहीं है, विलासिता, रिश्वतखोरी, लोभ और लूट-खसोट के रूप में आपके भयंकर शत्रु अब भी मौजूद हैं।

३० सितम्बर सन् १७६५ ई० को कोर्ट आफ़ डाइरेक्टर्स को लिखे गये लार्ड क्लाइव के पत्र से।

हमें बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि कुछ लोगों के दुराचार के कारण अंग्रेजों का नाम यहां बड़ा ही घृणित समझा जाने लगा है। हमारी यह दृढ़ इच्छा थी कि हम अपने शासन के स्वरूप को, जो रिश्वत खोरी के लिए इतना बदनाम है और सारा का सारा महकमा बुरी तरह से धनलोलुप बना हुआ है सिंहावलोकन न करें।

३। जनवरी सन् १७६६ के कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स के बराक से भेजे हुए पत्र से।

समस्त अंगरेज बस्ती में जो सार्वजनिक पतन के दृश्य पाये जाते, हमारे नौकरों में जो अत्याचार और अनीति फैली हुई है, उसे देखकर तो हमें बड़ा ही अफसोस हुआ। अरे ! संसार के किसी देश में ऐसा निर्दय अत्याचार नहीं हुआ होगा जिसके द्वारा उन्होंने सम्पत्ति की वे राशियां लूट लूट कर इकट्ठी की थीं।

—कोर्ट ऑफ डायरक्टर्स का पत्र १७ मई १७६६

"पिछले कारनामों का यदि सिंहावलोकन किया जाय तो ऐसे ऐसे रहस्य प्रकट होंगे जिनको सुनकर लोगों के दिल दहल जायँगे, अंग्रेज जाति के नाम पर कलङ्क का टीका लगेगा और अनेक बड़े बड़े और प्रसिद्ध परिवारों की इज्जत धूल में मिल जायगी"। लार्ड क्लाइव

८ सितम्बर सन् १७६६ के जार्ज उल्वे को लिखे गये पत्र से।

यदि हमारी शासन पद्धति का परिणाम यह हो कि एक समस्त राष्ट्र इससे पतित हो रहा है, तो उससे अधिक अच्छा तो यही हो कि हमें हिन्दुस्तान से बिलकुल निकाल दिया जाय। *

अगर इस आन्तरिक अशान्ति और गड़बड़ी से हम किसी प्रकार अपने को सुरक्षित भी बनालें और हिन्दुस्तान को निर्विघ्नता पूर्वक अपने अधीन बनाये रखने में हम समर्थ हो सकें, फिर भी मुझे तो बड़ा सन्देह है कि, देशी नरेशों के शासन-काल में यहाँ के लोगों की जैसी दशा थी हमारे शासनान्तर्गत उनकी अवस्था उससे अच्छी हो सकेगी, या नहीं ?

अतः ! अंग्रेजों द्वारा भारतवर्ष की विजय के परिणाम स्वरूप इस देश की उन्नति के बजाय सारे देश का पतन होगा। संसार में ऐसी किसी विजय का दूसरा उदाहरण आपको न मिलेगा जहां विजेताओं ने देश के निवासियों को शासन-यंत्र से एक दम इतना दूर रक्खा हो। देशी राज्यों में चाहे कितनी ही अव्यवस्था और अशान्ति हो ? पर वहां प्रत्येक व्यक्ति को अपने को ऊँचा उठा लेने के लिए मैदान खुला हुआ है। इसीसे वहां के लोगों में एक दूसरे से बढ जाने की प्रति स्पर्धा अथक परिश्रम, साहस-वृत्ति और स्वतंत्रता की भावना दिखाई पड रही है। हमारे अधीन जिस पतितावस्था और गुलामी में भारतीयों को रहना

---

* India Reform Tracts Tract Vi p. 112

पड़ता है उससे देशी राज्यों के निवासी भारतीयों की हालत कहीं अच्छी है।" सर थामस मुनरो

"भारतीय प्रजा पर मुनासिब कर लगाना तथा न्याय की उचित व्यवस्था कर देना कुछ भी नही है, यदि हम उसके चरित्र को उन्नत बनाने का उद्योग नहीं करते। कारण कि एक विदेशी सत्ता में तो स्वयं ही कुछ ऐसी बातें होती हैं, जिनके कारण लोगों की प्रवृत्ति पतन की ही ओर झुकती जाती है और जिसके कारण उन्हें डूबने से बचाना ज़रा टेढ़ी खीर है। यह एक पुरानी कहावत है कि जो अपनी स्वतंत्रता को खो बैठता है, वह अपने आधे गुणों से भी हाथ धो बैठता है। यह बात जिस प्रकार व्यक्तियों के लिए सत्य है, उसी प्रकार जातियों के लिए भी। किसी आदमी के पास यदि कुछ भी सम्पत्ति न हो, तो उससे उसका उतना पतन नहीं होता, जितना कि एक उस विदेशी सरकार के हाथों में, जिसमें कि प्रजा का कुछ भी हाथ नहीं है, एक राष्ट्र की सम्पत्ति सौंप देने से सारी जाति का पतन होता है। जिस प्रकार एक गुलाम स्वतंत्र मनुष्य के सम्मान वक़्त ओर विशेषाधिकार खो बैठता है, उसी प्रकार एक दास जाति भी अपने उस मान और उन विशेषाधिकारों को खो बैठती है, जो प्रत्येक जाति को उसके अधिकार के रूप में प्राप्त हैं। उसको अपने ऊपर कर लगाने का अधिकार नही रहता, अपने लिए वह क़ानून भी नही बना सकती. और देश की शासन-व्यवस्था में उसका कोई हाथ नहीं रहता।"

अपनी जाति के नरेश की निरंकुश सत्ता से नहीं, बल्कि विदेशियों की गुलामी से एक जाति की राष्ट्रीय भावना और जातीय चरित्र नष्ट होते हैं। जब किसी जाति के अन्दर अपना राष्ट्रीय चरित्र बनाये रखने की क्षमता नही रहती, तो उसके पास से सार्वजनिक और घरेलू जीवन के उच्चतम गुणों की पूंजी भी चली जाती है। जिसके कारण घरेलू

चरित्र के साथ साथ सार्वजनिक चरित्र भी नष्ट होजाता है।" सर थामस मनरो (Indian Spectator Fabruary 9th. 1899)

"देश के साधनों को समूल नष्ट कर देने के लिए यह एक ऐसी लूट-खसोट है, जिसकी पूर्त्ति के लिए कुछ भी नहीं किया गया। जातीय उद्योग धन्दे का नसों से यह उसका जीवन-रक्त चूस लेना है। और उसके स्थान पर कोई और दूसरा ऐसा काम नहीं किया गया जिससे कि जीवन तो बना रहता।" यह मिल द्वारा लिखित "भारतवर्ष का इतिहास" नामक पुस्तक के आधार पर जे० विल्सन ने अंग्रेजी शासन से भारत की अवस्था पर जो प्रभाव पडा उसके विषय मे लिखा है।

"हिन्दुस्तान के सुख और शान्ति के दिन तो बीत गये। किसी समय में उसके पास जो विपुल सम्पत्ति थी उसका अधिकांश भाग खींच लिया गया। लाखों भारतवासियों के हितों को मुट्ठी भर अंग्रेजों के लाभ के लिए बलिदान कर दिया गया और हमारे कु शासन ने भारत वर्ष की सारी शक्तियों को कुचल डाला। इस देश और यहां के निवासियों को हमारी शासन-पद्धति ने धीरे धीरे बिल्कुल ही कंगाल बना दिया है।"

"अंग्रेजी सरकार ने इस देश में लोगों को पीस जाने वाली लूट-खसोट की है, जिसके कारण देश और यहां के निवासी इतने दरिद्र होगये हैं कि जिसके समान संसार में कोई भी देश और जाति दरिद्र नहीं मिल सक्ती।"

"अंग्रेजों का मुख्य सिद्धान्त सारे भारतवासियों को हर प्रकार से अपने लाभ के लिए अपने हाथ की एक कठ-पुतली बना लेना रहा है। अगर यहां के लोगो की भलाई करना हमारा उद्देश्य होता, तो हमारा कार्य्य क्रम बिलकुल ही भिन्न होता और उसका परिणाम भी मौजूदा परिणाम के बिलकुल ही विपरीत निकलता। मै इस बात को बार बार दुहराता हू कि लोग हमे घृणा की दृष्टि से इस लिए नही देखते कि

हम विदेशी और भिन्न धर्म्मावलम्वी हैं। अपने प्रति उनकीऐसी भाव-
नायें बना देने के लिए हमें अपने ही को धन्यवाद देना चाहिए।
—१८३७ में बङ्गाल सिविल सरविस के मि० फ्रेडरिक जान शोर

"जो लोग भारतवर्ष से भलीभांति परिचित हैं उन सबकी एकमत
से यह राय है कि अनेक सुशासित छोटे-छोटे देशी राज्य हिन्दुस्तान
की प्रजा की राजनैतिक तथा नैतिक उन्नति के लिए कहीं अधिक उपयोगी
हैं।' माननीय महानुभाव (मि० लैंग) सरकारी पक्ष का समर्थन करते
हुए ऐसा समझते हैं कि अंग्रेज़ी प्रदेश में सब बातें अच्छी हैं और देशी
नरेशों के प्रदेश में सब बातें बुरी हैं। अपने पक्ष के समर्थन में वे अवध
का उदाहरण पेश कर सकते हैं, परन्तु मुझे तो सन्देह है कि अवध की
स्थिति सारे भारतवर्ष की वर्त्तमान अवस्था का एक साधारण दृश्य
हमारे सम्मुख उपस्थित कर सकती है। अगर देशी सरकार के कुशासन
के प्रमाण स्वरूप अवध का उदाहरण पेश किया जा सकता है तो उड़ीसा
का अकाल, जिसकी रिपोर्ट कुछ ही दिन में प्रकाशित हो जायगी; अंग्रेज़ी
शासन के विरुद्ध पेश किया जा सकता है, जो अवध की अवस्था से
कहीं अधिक भयानक है। देशी सरकारों की भांति अंग्रेज़ी सरकार हिंसा
और अनियमितता के लिए कभी भी दोषी नहीं बनी। परन्तु उसके
अपने कुछ अपराध हैं, जो उद्देश की दृष्टि से तो कहीं अधिक निर्दोष हैं,
परन्तु उनका परिणाम अत्यन्त भयानक है।

बड़े परिश्रम के साथ बनाई हुई हमारी भड़कीली शासन-पद्धति
और देशी भद्दी सरकारों के कार्य्यों और उनके परिणामों की तुलना की
जाय तो पता चलेगा कि लोगों के लिए देशी पद्धति कहीं अधिक लाभ-
दायक है।"

लार्ड सैलिसबरी के पार्लियामेंट में दिये गये भाषण से।

"भारतवर्ष की कष्ट गाथा और भी बढ़ जाती है। जहाँ से इतना कर, विना किसी सीधे मुआवजे के ढोलिया जाता है। क्योंकि हिन्दुस्तान का तो रक्त हमें चूसना ही है।"

लार्ड सैलिस्वरी

सन् १८३३ के कानून के पास होते ही गवर्नमेण्ट उसके अनुसार काम करने से बचने लगी। उन्हें रोकने और धोखा देने इन दो बातों में से हमें एक पसन्द करनी थी; अतः हमने उस मार्ग का अवलम्बन किया जो कम से कम सीधा था।—क्या हमारी जान बूझ कर और स्पष्ट रूप से की गई इतनी धोखे बाज़ियां उस क़ानून को रद्दी की टोकरी का रद्दी काग़ज नहीं बनातीं?—— लार्ड लिटन वाइसराय १७७८

राष्ट्र को चूसना

(स्व० दादा भाई नौरोजी के इंग्लैंड मे दिये गये एक भाषण से)

हमको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि राष्ट्र को चूसना किसे कहते हैं। यह बिलकुल ठीक है कि जब राज्य चलाया जायगा तो लोगों को कर देना ही पड़ेगा। परन्तु एक मनुष्य पर कर लगाने और उसका खून चूसने में बड़ा अन्तर है। आप, इंग्लैड निवासी लोग, अब प्रति वर्ष १५ शिलिंग या कुछ अधिक कर प्रति मनुष्य देते है। हम, हिन्दुस्थान में तीन या चार ही शिलिंग प्रति मनुष्य प्रति वर्ष देते हैं। इससे सम्भव है कि आप हमे दुनियां में सब से कम कर देने वाले मनुष्य समझें। लेकिन, बात यह नहीं है; हमारा भार आप से दूना अधिक है। आप लोग जो कर देते है वह कर राज्य के हाथ में जाता है, जिसे राज्य कई तरीकों से देश को वापिस कर देता है जैसे व्यापार में उन्नति करके स्वयं लोगों को लौटा कर। आपके धन में घटी नहीं होती है; वह केवल स्थान परिवर्तन करता रहता है। जो कुछ आप देते हैं। वह आप किसी न किसी रूप में फिर वापिस भी पाते हैं। पर घटे का अर्थ है

उतनी शक्ति का नाश। फर्ज कीजिए कि आप प्रति वर्ष सौ करोड़ मुद्रा कर देते हैं और राज्य उसे इस प्रकार इस्तेमाल करता है कि कुछ भाग ही देश को लौटता है, और शेष देश के बाहर चला जाता है। ऐसी दशा में आप चूसे गये और आपके जीवन का कुछ भाग बाहर गया। ख्याल कीजिए कि १०० करोड़ कर में से केवल ८० करोड़ ही आपको वेतन, व्यापार और शिल्प द्वारा वापिस मिलते हैं। ऐसी दशा में आप २० करोड़ प्रति वर्ष खो देते हैं। दूसरे वर्ष आप उतने ही निर्बल हो जावेंगे, और इसी प्रकार प्रति वर्ष आप निर्बल होते जावेंगे। मनुष्यों पर कर लगाने और उन्हें चूसने में यही अन्तर है। मान लीजिए कि आप पर फ्रांस के कुछ लोग राज्य करते हैं, और वे उन सौ करोड़ में से दस या बीस करोड़ प्रति वर्ष ले लेते हैं, तो यही कहा जायगा कि वे आपको चूसते हैं। राष्ट्र अपने जीवन का कुछ भाग प्रति वर्ष नष्ट करता रहेगा। भारत किस प्रकार चूसा गया ? आपके लिए मैंने फ्रांस निवासियों शासकों का अनुमान किया था। वैसे हम हिन्दुस्तानियों पर आप राज्य करते हैं। आप लोग हमारे व्यय और करों का इस प्रकार प्रबन्ध करते हैं कि हम जो सौ करोड़ मुद्राएं कर के रूप में देते हैं वे सौ की सौ हमें कभी वापस नहीं मिलतीं। केवल ८० करोड़ के लगभग ही वापिस मिलती है। देश की आय से प्रति वर्ष २० करोड़ मुद्राएं लूटी जा रही हैं। × × क्या यहां पर कोई ऐसा आदमी निकल सकता है, जो भारी कर देते हुए इस बात में सन्तुष्ट रहे कि देश के शासन में उसका कोई हाथ न रहे पर हमारा यही हाल है। देश के शासन में हमारा कोई हाथ नहीं। भारत की गवर्नमेंट का सब प्रकार की आमदनी के ज़रियों पर अधिकार है और वह मनमाना व्यवहार करती है। उनकी प्रत्येक बात मान लेने और लुटते रहने के सिवा हमारे पास कोई चारा नहीं है। इन १५० वर्ष से ब्रिटिश गवर्नमेंट इसी उसूल से राज्य कर रही है। परिणाम क्या हुआ ? मैं लार्ड सेलिसबरी के ही शब्द फिर उद्धृत करता हूँ, "क्योंकि

हिन्दुस्तान का रक्त चूस लिया गया है, इसलिए नश्तर उन स्थानों पर लगाना चाहिए जहां बहुत, पर्याप्त रक्त तो हो, न कि ऐसे स्थानों में जो कि उसकी कमी के कारण जर्जर हैं।" लार्ड सैलिसबरी ने बतलाया है कि भारत का सब से बड़ी आबादी—कृषक समुदाय, रक्त की कमी के कारण निर्बल हैं। यह २५ वर्ष पूर्व का कथन है और उसके बाद इन २५ वर्षों में उनका रक्त और भी चूस लिया गया। परिणाम यह हुआ कि वे इतने चूस लिये गये हैं कि मृत्यु के मुख मे पहुँच चुके। क्यों? इसलिए कि हमारे धन का एक बहुत बड़ा हिस्सा यहाँ से साफ उड़ा-लिया जाता है जो किसी रूप में वापिस नहीं किया जाता। यही रक्त चूसने का तरीका है। लार्ड सैलिसबरी खुद कहते हैं। हिन्दुस्तान की इतनी सारी आय बाहर भेज दी जाती है और उसके बदले में उसे कुछ नहीं दिया जाता। मैं आप से पूछता हूँ कि इन अकाल और प्लेग आदि में क्या कोई बड़ा रहस्य हैं? इस अनुचित राज्य शासन से भारत जितना खोखला हो गया है उतना कोई दूसरा देश कभी नहीं हुआ।

× × × ×

राज्य कर्मचारी बतलाते हैं कि हिन्दुस्तान पर उसकी ही भलाई के लिए शासन किया जाता है। वे कहते हैं कि वे करों से कोई लाभ नहीं उठाते। लेकिन यह बात गलत है। सच तो यह है, कि अभी तक हिन्दुस्तान पर वहां के निवासियों में कंगाली बढ़ाने के लिए शासन किया जा रहा है। क्या यह सदा जारी रह सकता है?

× × ×

इससे कुछ समय तक आप भले ही फलफूल सकते हैं। लेकिन एक समय वह आयेगा जब आपको इस अनुचित शासन का प्रतिफल उठाना पड़ेगा। लार्ड सेलिसबरी के कथन के जो अंश मैंने उद्घृत किये उनसे भारत की वास्तविक अवस्था का पता चलता है। यह बात नहीं है कि अंग्रेज़ राज-नीतिज्ञों में लार्ड सेलिसबरी ने ही प्रथम बार इस बात की घोषणा

की है, बल्कि, सौ वर्ष से सभी विचारवान और बुद्धिमान अंग्रेज़ और राजनीतिज्ञ समय समय पर यही कहते रहे है कि भारतवर्ष बिलकुल खोखला और शुष्क हो गया है और अन्त में उसकी मृत्यु निश्चित है। ये अकाल इसी चूसे जाने के कारण में आये है।

सस्ता-साहित्य-मंडल, अजमेर.

स्थापना सन् १९२५ ई०; मूलधन ४५०००)

उद्देश्य—सस्ते से सस्ते मूल्य में ऐसे धार्मिक, नैतिक, समाज सुधार सम्बन्धी और राजनैतिक साहित्य को प्रकाशित करना जो देश को स्वराज्य के लिए तैय्यार बनाने में सहायक हो, नवयुवकों में नवजीवन का संचार करे, स्त्रीस्वातंत्र्य और अछूतोद्धार आन्दोलन को बल मिले।

संस्थापक—सेठ घनश्यामदासजी बिड़ला (सभापति) सेठ जमनालालजी बजाज आदि सात सज्जन।

मंडल से—राष्ट्र-निर्माणमाला और राष्ट्र-जागृतिमाला ये दो मालाएँ प्रकाशित होती है। पहले इनका नाम सस्तीमाला और प्रकीर्णमाला था।

राष्ट्र-निर्माणमाला (सस्तीमाला) में प्रौढ़ और सुशिक्षित लोगों के लिए गंभीर साहित्य की पुस्तकें निकलती हैं।

राष्ट्र-जागृतिमाला (प्रकीर्णमाला) समाज सुधार, श्रम-संगठन अछूतोद्धार और राजनैतिक जागृति उत्पन्न करनेवाली पुस्तकें निकलती हैं।

स्थाई ग्राहक होने के नियम

(१) उपर्युक्त प्रत्येक माला में वर्ष भर में कम से कम सोलह सौ पृष्ठों की पुस्तकें प्रकाशित होती हैं। (२) प्रत्येक माला की पुस्तकों का मूल्य डाक व्यय सहित ४) वार्षिक है। अर्थात् दोनों मालाओं का ८) वार्षिक। (३) स्थाई ग्राहक बनने के लिए केवल एक बार ॥) प्रत्येक माला की प्रवेश फ़ीस ली जाती है। अर्थात् दोनों मालाओं का एक रुपिया। (४) किसी माला का स्थायी ग्राहक बन जाने पर उसी माला की पिछले वर्षों में प्रकाशित सभी या चुनी हुई पुस्तकों की एक एक प्रति ग्राहकों को लागत मूल्य पर मिल सकती है। (५) माला का वर्ष जनवरी मास से शुरू होता है। (६) जिस वर्ष से जो ग्राहक बनते हैं उस वर्ष की सभी पुस्तकें उन्हें लेनी होती हैं। यदि उस वर्ष की कुछ पुस्तकें उन्होंने पहले से ही ले रखी हों तो उनका नाम व मूल्य कार्य्यालय में लिख भेजना चाहिए। उस वर्ष की शेष पुस्तकों के लिए कितना रुपिया भेजना चाहिये, यह कार्य्यालय से सूचना मिल जायगी।

सस्ती-साहित्य-माला के प्रथम वर्ष की पुस्तकें

(१) दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह—प्रथम भाग (महात्मा गांधी) पृष्ठ सं० २७२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।≡) सर्वसाधारण से ॥)

(२) शिवाजी की योग्यता—(ले० गोपाल दामोदर तामस्कर एम० ए० एल० टी०) पृष्ठ १२२ मूल्य ।=) ग्राहकों से ।)

(३) दिव्य जीवन—पुस्तक दिव्य विचारों की खान है। पृष्ठ-संख्या १३६, मूल्य ।=) ग्राहकों से ।) चौथी बार छपी है।

(४) भारत के स्त्री रत्न—(पाँच भाग) इस में वैदिक काल से लगाकर आज तक की प्रायः सब धर्मों की आदर्श, पतिव्रता, विदुषी और भक्त कोई ५०० स्त्रियों की जीवनी होगी। प्रथम भाग पृष्ठ ४१० मू० १) ग्राहकों से ॥) दूसरा भाग दूसरे वर्ष में छपा है। पृष्ठ ३२० मू० ॥-)

(५) व्यावहारिक सभ्यता—छोटे बड़े सब के उपयोगी व्यावहारिक शिक्षाएँ। पृष्ठ १२८, मूल्य ।)॥ ग्राहकों से ≡)॥

(६) आत्मोपदेश—पृष्ठ १०४, मू० ।) ग्राहकों से ≡)

(७) क्या करें? (टॉलस्टॉय) महात्मा गांधी जी लिखते हैं—"इस पुस्तक ने मेरे मन पर बड़ी गहरी छाप डाली है। विश्व-प्रेम मनुष्य को कहाँ तक ले जा सकता है, यह मैं अधिकाधिक समझने लगा" प्रथम भाग पृष्ठ २६६ मू० ॥=) ग्राहकों से ।≡)

(८) कलवार की करतूत—(नाटक) (ले० टाल्सटाय) अर्थात् शराबखोरी के दुष्परिणाम; पृष्ठ ४० मू० -)॥। ग्राहकों से -)।

(९) जीवन साहित्य—(भू० ले० बाबू राजेन्द्रप्रसादजी) काका कालेलकर के धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयों पर मौलिक और मननीय लेख—प्रथम भाग-पृष्ठ २१८ मू० ॥) ग्राहकों से ।=)

प्रथम वर्ष में उपरोक्त नौ पुस्तकें १६६८ पृष्ठों की निकली है

सस्ती-साहित्य-माला के द्वितीय वर्ष की पुस्तकें

(१) तामिल वेद—[ले० अछूत संत ऋषि तिरुवल्लुवर] धर्म और नीति पर अमृतमय उपदेश—पृष्ठ २४८ मू० ॥=) ग्राहकों से ।≡)॥

(२) स्त्री और पुरुष [म० टाल्सटाय] स्त्री और पुरुषों के पारस्परिक सम्बन्ध पर आदर्श विचार—पृष्ठ १५४ मू०।=) ग्राहकों से ।)

(३) हाथ की कताई बुनाई [अनु० श्री रामदास गौड़ एम० ए०) पृष्ठ २६७ मू० ॥=) ग्राहकों से ।=)॥ इस विषय पर आई हुई ६६ पुस्तकों में से इसको पसंद कर म० गांधीजी ने इसके लेखकों को १०००) दिया है।

(४) हमारे ज़माने की गुलामी (टाल्सटाय) पृष्ठ १०० मू० ।)

(५) चीन की आवाज़—पृष्ठ १३० मू० ।-) ग्राहकों से ≡)॥

(६) द० अफ्रिका का सत्याग्रह—(दूसरा भाग) ले० म० गांधी पृष्ठ २२८ मू० ॥) ग्राहकों से ।=) प्रथम भाग पहले वर्ष में निकल चुका है।

(७) भारत के स्त्रीरत्न (दूसरा भाग) पृष्ठ लगभग ३२० मू० ॥।-) ग्राहकों से ॥≡) प्रथम भाग पहले वर्ष में निकल चुका है।

(८) जीवन साहित्य [दूसरा भाग] पृष्ठ २०० मू० ॥) ग्राहकों से ।≡) इसका पहला भाग पहले वर्ष में निकल चुका है।

दूसरे वर्ष में लगभग १६५० पृष्ठों की ये ८ पुस्तकें निकली हैं

सस्ती-प्रकीर्ण-माला के प्रथम वर्ष की पुस्तकें

(१) कर्मयोग—पृष्ठ १५२, मू० ।=) ग्राहकों से ।)

(२) सीताजी की अग्नि-परीक्षा—पृष्ठ १२४ मू० ।-) ग्राहकों से ≡)॥

(३) कन्या-शिक्षा—पृष्ठ सं० ९४, मू० केवल ।) स्थायी ग्राहकों से ≡)

(४) यथार्थ आदर्श जीवन—पृष्ठ २६४, मू० ॥-) ग्राहकों से ।=)॥

(५) स्वाधीनता के सिद्धान्त—पृष्ठ २०८ मू० ॥) ग्राहकों से ।-)॥

(६) तरंगित हृदय—(ले० पं० देवशर्म्मा विद्यालंकार) भू० ले० पं० पद्मसिंहजी शर्मा पृष्ठ १७६, मू० ।≡) ग्राहकों से ।-)

(७) गंगा गोविन्दसिंह (ले० चण्डीचरणसेन) ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों और उनके कारिन्दों की काली करतूतें और देश की विनाशोन्मुख स्वाधीनता को बचाने के लिए लड़ने वाली आत्माओं की वीर गाथाओं का उपन्यास के रूप में वर्णन—पृष्ठ २८० मू० ॥=) ग्राहकों से ।≡)॥

(८) स्वामीजी [श्रद्धानंदजी] का बलिदान और हमारा कर्तव्य [ले० पं० हरिभाऊ उपाध्याय] पृष्ठ १२८ मू० ।-) ग्राहकों से ।)

(९) यूरोप का सम्पूर्ण इतिहास [प्रथम भाग] यूरोप का इतिहास स्वाधीनता का तथा जागृत जातियों की प्रगति का इतिहास है। प्रत्येक भारतवासी को यह ग्रन्थ रख पढ़ना चाहिये। पृष्ठ २६६ मू० ॥=) ग्राहकों से ॥-)

प्रथम वर्ष में १७९२ पृष्ठों की ये ९ पुस्तकें निकली हैं